इकाई 7 राष्ट्रीयता के विकास में आधुनिक भारतीय साहित्य का योगदान

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 आधुनिक भारतीय साहित्य और समाज का संबंध

7.3 भारतीय साहित्य की राष्ट्रीय–सांस्कृतिक मनोभूमिका

7.4 भारतीय साहित्य के नवजागरणवादी बोध का स्थायी भाव : राष्ट्रीयता

7.5 राष्ट्रीय मुक्ति चेतना की सर्जनात्मक अभिव्यक्ति

- 7.5.1 भारतीय भाषाओं में पत्रकारिता का उदय
- 7.5.2 नाटक
- 7.5.3 कथा साहित्य
- 7.5.4 कविता
- 7.5.5 गद्य : जीवनी, आत्मकथा, निबंध

7.6 आधुनिक भारतीय साहित्य में व्यक्त राष्ट्रीयता का स्वरूप

- 7.6.1 राष्ट्रीय–सांस्कृतिक अस्मिता के प्रति नया दृष्टिकोण
- 7.6.2 पराधीनता और दमन के प्रति विद्रोही स्वर
- 7.6.3 जनक्रांति का हिंसक–अहिंसक रूप–रंग
- 7.6.4 प्रकृति–प्रेम के माध्यम से राष्ट्रीयता की अभिव्यक्ति
- 7.6.5 भविष्य के प्रति आस्था और उल्लास की अभिव्यक्ति
- 7.6.6 देशभक्ति और जनजागरण का प्रकाश

7.7 सारांश

7.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

7.9 बोध प्रश्नों / अभ्यासों के उत्तर

7.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- आधुनिक भारतीय साहित्य और समाज का संबंध बता सकेंगी / सकेंगे;
- भारतीय साहित्य की राष्ट्रीय–सांस्कृतिक मनोभूमिका का उल्लेख कर सकेंगी / सकेंगे;
- भारतीय साहित्य में व्यंजित नवजागरण और भारतीय परिदृश्य का विवरण सकेंगी / सकेंगे; और
- साहित्य की विभिन्न विधाओं में इस परिदृश्य का स्वरूप विश्लेषित कर सकेंगी / सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम आपको बताएंगे कि राष्ट्रीयता के विकास और जागरण सुधार में भारतीय साहित्य ने किस रूप में योगदान दिया। इस इकाई में आपको साहित्य की राष्ट्रीय–सामाजिक भूमिका की जानकारी मिलेगी।

7.2 आधुनिक भारतीय साहित्य और समाज का संबंध

साहित्य अपने समाज का दर्पण होता है। किसी समाज की संस्कृति, आचार–विचार, जीवन–व्यवहार की पद्धतियाँ, आशाएं, आकांक्षाएं, पूर्वग्रह, अभिरुचियां, हर्ष, विषाद, उल्लास आदि सभी कुछ उसके साहित्य में अभिव्यक्त होता है। हाँ, इस अभिव्यक्ति का स्वरूप और परिणाम भिन्न होता है। किसी समय विशेष में किसी समाज के साहित्य में किन्हीं विशिष्ट प्रवृत्तियों और अभिरुचियों की प्रधानता होती है तो दूसरे समय विशेष में किन्हीं अन्य प्रवृत्तियों और अभिरूचियों की। इस भिन्नता के लिए भी काफी हद तक सामाजिक परिवेश जिम्मेदार होता है। हिंदी साहित्य के आदिकाल में वीर काव्यों की प्रधानता तथा मध्यकाल में भक्ति काव्य की प्रधानता इसी परिवेशगत अंतर का परिणाम है। साहित्य और समाज के ऐसे संबंध के आधार पर ही आचार्य रामचंद्र शुक्ल साहित्य को किसी भी देश की 'जनता की संचित चित्तवृत्तियों का प्रतिफलन' मानते हैं।

साहित्य और समाज के इस अन्योन्याश्रित संबंध के भीतर भी कुछ दौर ऐसे होते हैं जब साहित्यकार अपने परिवेश के प्रति, अपने आसपास की स्थितियों और लोगों के प्रति न केवल ज्यादा संवेदनशील और जागरूक होता है बल्कि उनके प्रति अपने दायित्व के निर्वाह में ज्यादा सजग और जिम्मेदार होता है। वह साहित्य को समाज के जागरण, सुधार, विकास और संघर्ष के लिए औजार के रूप में इस्तेमाल करना चाहता है। मध्यकाल में कबीर ऐसे ही साहित्यकार हुए थे। आधुनिक भारतीय साहित्यकारों की विशेषता यह रही है कि ये न केवल अपने दायित्व के प्रति बहुत सजग हैं बल्कि साहित्य के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन के लिए छटपटा रहे हैं।

नवजागरण ने भारतीय जन–मानस में जिस मुक्ति की आकांक्षा का संचार किया, उसे साहित्यकार न केवल अपनी रचना के माध्यम से अभिव्यक्त करता है बल्कि अपनी रचना के द्वारा वह जनजागरण का परिवेश तैयार करता है, जनता को उसकी गुलामी, बदहाली और बेबसी के कारणों का ध्यान दिलाता है, और उस हालत से निकलने और सुधरने का रास्ता बताता है। उसकी कमजोरियों, कुरीतियों और सीमाओं से बाहर निकलने को प्रेरित करता है।

इस तरह आधुनिक युग का साहित्यकार आश्रयदाताओं का मनोरंजन अथवा भोगविलास मात्र करके संतुष्ट नहीं हो जाता। वह समाज का नेतृत्व ग्रहण करता है। इस देश के करोड़ों निवासियों की गरीबी, भूख, पीड़ा को महसूस करता है और उससे उबरने में उसका सहभागी बनता है। इसके लिए वह देश की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों को समझने का प्रयास करता है। उनके भीतर व्याप्त खामियों पर निगाह डालता है और इन खामियों को दूर करने का रास्ता खोजता है। उन्हें उस रास्ते पर लाने की युक्ति निकालता है।

इस तरह इस काल में साहित्यकार को अपने दायित्व का पूरा बोध है, यह उसका भरपूर निर्वाह करने को तत्पर है। वह समझ गया है कि इस देश के दारिद्रय का सबसे बड़ा कारण

है पराधीनता। पराधीनता से मुक्ति साहित्यकार का लक्ष्य बन जाता है और रचनाकार आजादी की लड़ाई में सक्रिय ऐसे सेनानी के रूप में उभरकर जाता है जो अपने आसपास के, अपनी भाषायी और साहित्यिक पहुँच के सारे जन समाज को अपने साथ लेकर चलता है। इसके लिए वह व्यापक और समग्र राष्ट्रीय चेतना का निर्माण करता है। इस चेतना के विकास में कारगर भूमिका अदा करता है। राष्ट्रीय चेतना का विकास साहित्यकार किस ढंग से करता है, इसकी चर्चा हम आगे करेंगे।

7.3 भारतीय साहित्य की राष्ट्रीय–सांस्कृतिक मनोभूमिका

दरअसल भारतीय साहित्य की प्रबल प्रवृत्तियों में अत्यंत प्रबल प्रवृत्ति है राष्ट्रीयता की अनेकोन्मुखी अभिव्यक्ति। इस दृष्टि से राष्ट्रीयता एक अर्थवान एवं प्रासंगिक अवधारणा के रूप में उभरती है। इस राष्ट्रीयता के अंतर्गत भारत ने नवीन स्वत्व की धारणा भारतेंदु के शब्दों में 'स्वत्व निज भारत गहै' के उद्घोष में मुखर हो जाता है और यह राष्ट्रीयता ब्रिटिश साम्राज्यवाद द्वारा स्थापित पराधीनता से मुक्ति पाने की भावना का पर्याय बन जाती है। इसके अंतर्गत भारत अपनी राष्ट्रीय–सांस्कृतिक परंपराओं के साथ उठ खड़ा होता है और जन–मानस में मातृभूमि, देशभक्ति और राष्ट्रीयता की भावना का उदय होता है। ध्यान देने की बात यह है कि हमारा राष्ट्रवाद पश्चिम के राष्ट्रवाद की अवधारणा से एकदम अलग है पश्चिम का राष्ट्रवाद अपनी अंतिम परिणति में नाजीवादी, फासिस्टवादी, अधिनायकवादी शक्ल अख्तियार कर लेता है किंतु भारतीय राष्ट्रवाद इन पश्चिमी धारणाओं के नजदीक तक नहीं फटकता। भारतीय राष्ट्रवाद का चेहरा मानववाद और मानवतावाद का पर्याय हो जाता है, जिसमें अन्याय, शोषण और उत्पीड़न के विरूद्ध विद्रोह का स्वर है। ध्यातव्य है कि हमारे राष्ट्रवाद की मूल प्रेरणा संत परंपराओं से फूटती है जिसमें सम्प्रदायवादी–क्षेत्रीयतावादी मानसिकता ही राष्ट्रीयता के रूप में सामने आती है। इसलिए इस राष्ट्रीयता का स्वरूप देशभक्ति की व्यापक भावना में निखरता है और यह देशभक्ति उस विश्वदृष्टि को सहेजती है जो मनुष्य मात्र के कल्याण की भावना से अपनी दिशा निर्धारित करती है। संत जागरण की परंपरा आधुनिक काल में उस मानव को केंद्र में लाती है जो संकुचित विचारों का हर कोण से प्रतिवाद करती है। इसीलिए इसमें हमारी राष्ट्रीयता–सांस्कृतिक और जातीय अस्मिता नई अर्थच्छवियों के साथ उभरती है। यही अर्थच्छवियाँ हिंदी साहित्य के प्रवर्तक भारतेंदु, बालकृष्ण भट्ट, बंगला के माइकेल मधुसूदन दत्त, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, बकिमचंद्र चटर्जी, द्विजेन्द्रलाल राय, गिरीशचंद्र घोष, रवींद्रनाथ ठाकुर, असमिया में लक्ष्मीनाथ बेजबरूआ, हेमचंद गोस्वामी, सत्यनाथ बरा, उड़िया में फकीर मोहन सेनापति, राधानाथ राय, मधुसूदन, मराठी में केशवसुत नारायण वामन, तिलक, विनायक, गोविंदागज, गुजराती में दुर्गाराय मेहता, दलराम ढाया भाई, नर्मदाशंकर, गोवर्धन राम त्रिपाठी, उमाशंकर जोशी, तमिल साहित्य में सुब्रह्मण्यम भारती, वेद नायकम पिल्ले, नामाक्कल रामलिंगम पिल्लै, भारतीदासन, कल्कि, तेलुगु साहित्य में वीरेश लिंगम, गुरजाड अप्पाराव, वेंद्र वेंकटराम शास्त्री, रामचंद्रालु कन्नड़ में मास्ति वेंकटेश आयंगर, डी.वी.गुंडप्पा, रामचंद्र बेद्रे, मलयालम में नारायण गुरू, केरल वर्मा राजराज वर्मा, कुमारन आशान, उर्दू में हाली, मौलाना शिवली, नजीर, गालिब, बिलगिरामी, सिंधी में मास्टर किशनचंद हिरदिलगीर, पंजाबी में भाई वीर सिंह, मोहन सिंह, कश्मीरी में गुलाम अहमद महजूद, दीनानाथ कादिम, मिर्जा गुलाम हसन आदि उल्लेखनीय नामों में देखी जा सकती है।

भारतीय साहित्य की उन्नीसवीं शताब्दी नवजागरण की विशिष्ट शक्तियाँ लेकर आती है। बंकिम का उपन्यास 'आनंदमठ', रवींद्रनाथ का उपन्यास 'गोरा' नवजागरण युग की संपूर्ण चेतना का प्रतिनिधित्व करता है। फकीर मोहन सेनापति ने 'रामायण' और 'महाभारत' के

अनुवाद से एक नवीन चेतना का निर्माण किया और उस परंपरा पर ध्यान दिलाया जिसमें हमारी संपूर्ण जातीय अस्मिता के प्रेरणा–स्रोत निहित हैं। मराठी में बी.पी किर्लोस्कर, गोविंदवल्लभ देवल, श्रीपाद कोल्हटकर, कृष्णजी प्रभाकर खांडिलकर, कानिटकर नरसिंह चिंतामणि केलकर ने मराठी नाटक और रंगमंच की परंपरा को देशभक्ति के भावों की ओर उन्मुख किया। हरिनारायण आप्टे और वामन मल्हार जोशी, मामा वरेरकर, सीताराम फड़के, विष्णु सखाराम खांडेकर के कथा साहित्य ने सामाजिक सुधार आंदोलनों से प्रेरणा लेकर ऐसी विचारभूमि निर्मित्त की जो पराधीनता के विरूद्ध आवाज उठाती है। नर्मदाशंकर ने गुजराती में दादाभाई नौरोजी से प्रेरणा लेकर देशभक्ति की भावना को आगे बढ़ाया। तिलक, गाँधी और गोखले के विचारसूत्र भारतीय साहित्य में बिंधते गए। कहना न होगा कि भारतीय साहित्य पर तिलक के 'गीता भाष्य' या कर्मयोगशास्त्र ने गहरा प्रभाव डाला। आर्यसमाज आंदोलन प्रार्थना समाज और ब्रह्म समाज की अवधारणाएं उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध और बीसवीं शताब्दी के प्रथम तीन दशकों की साहित्य विधाओं में अनेक रूपों में अभिव्यक्त हुई। आधुनिक भारतीय सांस्कृतिक साहित्य ने जिस क्रांतिधर्मी मुद्रा का विस्फोट किया है उसके मूल में दो प्रबल संस्कृतियों की टकराहट देखी जा सकती है। ब्रिटिश साम्राज्यवाद के प्रवक्ता यह घोषणा करते थे कि भारत के पास एक शानदार अतीत तो है लेकिन उनका वर्तमान निराशाजनक है। भारत के वर्तमान को बनाने का दम्भ विजेता जाति दोहराती थी और इसका अर्थ भारतीय समाज सुधारक नेता और रचनाकार अच्छी तरह समझते थे कि परंपरागत भारतीय समाज के आधुनिकीकरण का अर्थ है भारतीय समाज को उसके परंपरगत स्रोतों से विच्छिन्न करते हुए भारतीय समाज का पश्चिमीकरण। पश्चिमीकरण की इस प्रक्रिया में राजाराम मोहन राय और केशवचंद्र सेन ने तो योगदान दिया किंतु दादाभाई नौरोजी, तिलक, लाजपतराय, गोखले, अरविंद घोष, विवेकानंद और गांधी पश्चिमीकरण के खिलाफ विद्रोही तेवर अपनाते हैं। विजेता जाति किसी भी देश की ऐतिहासिक स्मृति को कैसे भ्रष्ट करती है और करना चाहती है इस बात को भारतेंदु हरिश्चंद्र, भाई वीर सिंह, नर्मदा शंकर और रवींद्रनाथ आदि हमारे नवजागरण के रचनाकार अच्छी तरह समझते हैं। अंग्रेजों ने जो लूट तंत्र देश में स्थापित किया, उसके विरूद्ध भारतेंदु के कथन एक प्रकार से संपूर्ण देश की व्यथा कथा के प्रतीक हैं :

1. अंग्रेज राज सुखसाज सजै अति भारी
   पै स्वधन विदेश चलि जाति इहै अति ख्वारी।

2. अंधाधुंध मची चहुँ देशान मानहु राजा रहत विदेशा

इस काल के सभी रचनाकारों ने पूरे देश को 'अंधेर नगरी' घोषित किया और भारत दुर्दशा के बिंब साहित्य के अनेक रूपों में प्रस्तुत किए। भारतेंदु हरिश्चंद्र का निम्नलिखित कथन विदेशी लूटतंत्र की पूरी स्थिति–परिस्थिति को सामने लाता है –

कहाँ करूणानिधि केशव सोये
जागत नाहिं अनेक जतन करै भारतवासी रोएं

यहाँ पर भारतवासियों का रोना सामान्य कवि कथन न होकर उस विशेष अर्थ की प्रतिध्वनि है जिस त्रासदी से पूरा का पूरा देश तबाही और अपमान भोग रहा है। इस स्थिति से उबरने के लिए भारतीय साहित्य के रचनाकारों ने स्वदेशाभिमान, स्वभाषाभिमान, स्वदेशी गौरव, मातृभूमि वंदना और बड़े–बड़े पौराणिक तथा प्राकृतिक प्रतीकों को अपनी सर्जना के केंद्र में रखा। 'आनंद मठ का गीत 'बंदे मातरम' एक प्रकार से संपूर्ण भारतीय मानसिकता का प्रतीक है। यह इतना बड़ा प्रतीक गीत है कि अरविंद ने इस प्रेरणा को आगे बढ़ाते हुए 'बंदे मातरम' नामक पत्र निकाला।

तूफानों से खेलने की तमन्ना राष्ट्रीयपरक साहित्य की मनोभूमिका में सर्वत्र उमड़ती–घुमड़ती मिलती है। पराधीनता की बेड़ियों को तोड़ने का प्रथम जन संग्राम था 1857 का विद्रोह। इस स्वाधीनता संग्राम में राजा और रंक, हिंदू और मुसलमान, मराठी–हिंदी भाषी, उत्तरी और दक्खिनी कंधे से कंधा मिलाकर लड़े। सुभद्रा कुमारी चौहान का यह कथन भारतीय जनमानस का पर्याय बिंब है –

'महलों ने दी आग झोंपड़ी ने ज्वाला सुलगाई थी
यह स्वतंत्रता की चिनगारी अंतरतम से आई थी।'

भारतीय रजवाड़ों के छोटे–छोटे सामंत एक झंडे के नीचे आकर युद्ध की आग में कूदे। इस युद्ध का पूरा चरित्र साम्राज्यवाद विरोधी, सामंतवाद–विरोधी और देशभक्ति की भावना से परिपूर्ण है। एक ऐसी देशभक्ति जिसमें जाति–धर्म के मतभेदों को भुलाकर जातीय अस्मिता के लिए युद्ध किया गया। इस स्वाधीनता संग्राम का नेतृत्व फौजी वर्दी में किसानों–मजदूरों ने किया और देशी राजाओं तथा नवाबों ने जनता का सहयोग किया। अंग्रेजों ने हर संभव प्रयास किया कि हिंदू–मुस्लिम सम्प्रदायवाद उभरे. पर उन्हें सफलता नहीं मिली। ब्रिटिश साम्राज्यवाद भेदभाव की जिस नीति से इस देश को शासित कर रहा था उसकी यह सबसे बड़ी पराजय थी। सच्चे अर्थों में यह स्वाधीनता संग्राम भारतीय जनता का जातीय संग्राम था। 1857 की क्रांति को लेकर सभी भारतीय भाषाओं में अनगिनत लोकगीतों की रचना हुई और इन सभी का मूल स्वर यही है–

'कठिन सिपाई द्रोह अनल जा जलबल नासी
ता भय सिर न उठाय सकत कहैं भारतवासी'

ब्रिटिश साम्राज्यवादी शासन की बर्बरता के चित्र पूरे भारतीय साहित्य में भरे पड़े हैं। ये चित्र देश को लूटने–उजाड़ने वाली उपनिवेशवादी शक्तियों के सीधे चित्र हैं। अपने परिमार्जित और कलात्मक रूप में यही अभिव्यक्ति केशवसुत, भारतेंदु, नर्मदाशंकर, सुब्रह्मण्यम भारती, भाई वीर सिंह आदि के सृजन में दृष्टिगत होती है।

7.4 भारतीय साहित्य के नवजागरणवादी बोध का स्थायी भाव : राष्ट्रीयता

आधुनिक काल के भारतीय नवजागरण में भारतीय साहित्य में राष्ट्रीय–सांस्कृतिक रूप में अभिव्यक्ति पाई है क्योंकि राष्ट्रीय–सांस्कृतिक अस्मिता को बचाने की चिंता ही हमें खाए जा रही थी। भीतर से हम आंदोलित और उन्मथित थे। एशिया का नवजागरण हमें प्रेरित करता था। बीसवीं शताब्दी में आधुनिक सांस्कृतिकरण, राजनीतिकरण, आर्थिकीकरण, सामाजिकीकरण, के जो अनेक आंदोलन चले हैं वे अकारण नहीं हैं। उनके पीछे कार्य–कारण परंपरा से जुड़ी हुई एक दृष्टि है। जीवन दृष्टि की यही चेतना राष्ट्रीयता या आधुनिक भावबोध का निर्माण करती है। इनमें मध्ययुगीन जीवन मूल्यों और दृष्टियों का पूरी तरह निशेध नहीं है क्योंकि कहीं न कहीं नरसी मेहता, नारायण हरि, तुकाराम, ज्ञानदेव, कबीर, चैतन्य महाप्रभु, बल्लभाचार्य और रामानंद की चिंतन परंपरा धड़कती है। इस संत चेतना के स्वर ने पराधीन भारत में अपनी परंपरा और संस्कृति पर पुनर्विचार, पुनर्व्याख्या और पुनर्मूल्यांकन के लिए हमें प्रेरित किया। फलतः हमने अपनी चिंतन परंपराओं को समझने के लिए अतीत को छानना–बीनना शुरू किया। इस सांस्कृतिक छानबीन में हमने पाया कि हमारी सांस्कृतिक एकता और राष्ट्रीयता के आधार को इतिहास ही नहीं भूगोल में भी तय करना है। कृष्ण–राम–शिव की एकता से कम महत्वपूर्ण तथ्य गंगा–यमुना–कृष्णा–कावेरी

की धुरी नहीं है। कृष्णा–कावेरी घाटी में इस देश के अनेक विचार आंदोलन पनपे और घनीभूत हुए। इस देश के राजाओं में यह विश्वास बराबर मौजूद रहा कि राजलक्ष्मी कायम तभी रह सकती है जब वे कृष्णा–कावेरी धुरी को अपने पौरूश से कायम कर लेने में सक्षम हो। इसलिए हमारी संस्कृति में देशभक्ति का यह आयाम यशोगान के स्वर में निरंतर कायम रहा। बीसवीं शताब्दी के दशकों में पूरे देश में आदर्शमूलक राम, कृष्ण, शिव, गंगा, हिमालय प्रधान कविताएं लिखी गई। मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध, माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा नवीन, रामधारी सिंह दिनकर आदि ने हिंदी में जिस राष्ट्रीय साहित्य की अवधारणा को भारतीय साहित्य में पुष्ट किया उसमें राष्ट्रीयता से ज्यादा भारतीयता है और भारतीयता से ज्यादा राष्ट्रीयता। ऐसी स्थिति के कारण राष्ट्रीयता से भारतीयता को, भारतीयता से राष्ट्रीयता को अलग कर पाना शिव की जटाओं को सुलझाना है। अलगाने की कोशिश में प्रायः एहसास यही होता है कि भारतीय साहित्य की भारतीयता में राष्ट्रीयता ही वह स्थायी भाव है जो अपने सांस्कृतिक बोध के स्तर पर एक विशेष स्वाद देता है। सुब्रह्मण्यम भारती और मैथिलीशरण गुप्त उमाशंकर जोशी और पुट्टप्पा अलग–अलग भाषाओं में लिख जरूर रहे थे लेकिन उनकी कविता का राष्ट्रीय–सांस्कृतिक बिंब एक है। यह कहना ज्यादा सही होगा कि सोलह–सत्रह भारतीय भाषाएं मिलकर एक ऐसे राष्ट्रीय साहित्य के भीतर से निर्मित राष्ट्रीयता का समग्र बिंब प्रस्तुत करते हैं जिसमें अखंड राष्ट्र का जागृत नाद अपनी विविधताओं को लिए हुए दमक रहा है। ऊपर से देखने पर ऐसा लगता है कि राष्ट्रीयता एक जटिल और चुनौतीपूर्ण प्रबंध है, किंतु भीतर से देखने पर, विशेष कर भारतीय साहित्य के इतिहास से भीतर से मथने पर, हम पाते हैं कि यह भारतीय साहित्य की मूलभूत एकता को पुष्ट करता है। तमिल के भारतीदासन मणिशेखरन वरदराजन, तेलगु के वल्लारी रामप्रोलु सुब्बाराव, श्रीरंगम श्रीनिवास राव, पंतुलु विश्वनाथ सत्यनारायण, कन्नड़ के दत्तात्रेय रामचंद्र बेद्रे, विनायक कृष्ण गोकाक, गोपाल कृष्ण अडिग, शिव रूद्रप्पा, मलयालम में वल्लतोल नारायण मेनन, श्रीशंकर कुरूप्प, तकषी शिवशंकर पिल्लै, उर्दू के चकबस्त, अकबर इलाहाबादी, फैज अहमद फैज, मोहाली, फिराक गोरखपुरी, सिंधी के हैदर बख्श दतोई, परमानंद मेवाराम, पंजाबी के गुरूबख्श सिंह, अमृता प्रीतम, राजेंद्रसिंह वेदी, नानकसिंह आदि के नाम महत्वपूर्ण है। हिंदी में प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, बालमुकुंद गुप्त, महावीर प्रसाद द्विवेदी आदि ने साहित्य को पुराने रीतिवाद से मुक्त करते हुए हिंदी नवजागरण को एक नया अर्थ दिया। बंगला साहित्य का नवजागरण, मराठी साहित्य का नवजागरण, उर्दू साहित्य का नवजागरण, गुजराती और हिंदी का नवजागरण स्वाधीनता संग्राम से प्रेरित होते हुए भी राष्ट्रीयता के अर्थ प्रतीकों के स्तर पर थोड़ा भिन्न दिखाई देता है। इस भिन्नता का एक कारण यह है कि बंगला के नवजागरण पर पश्चिम का असर अधिक है और हिंदी प्रदेशों के नवजागरण पर संत परंपरा और और स्वदेशी आंदोलनों की गहरी छाप है। रामनरेश त्रिपाठी के 'पथिक' मैथिलीशरण गुप्त के 'भारत भारती', माखनलाल चतुर्वेदी के 'हिमतरंगिणी', नवीन जी के 'हम विशपायी जनम के, तथा दिनकर के 'हुंकार' के स्वर में कबीर और तुलसी की देशी ठसक है। पूरे के पूरे भारतीय साहित्य की राष्ट्रीयता को मैथिलीशरण की 'भारत–भारती' ने वाणी दी। भारतेंदु और फकीर मोहन की तरह गुप्त जी के कविधर्म का स्थायी भाव है 'भारत दुर्दशा' का चित्रण। वह इस यर्थाथ को कभी आंखों से ओझल नहीं करना चाहते। यह अकारण नहीं है कि उनकी कविता में श्रीमद् भगवद्गीता ध्वनित होता है। वे छायावादी, रहस्यवादी प्रवृत्तियों के बीच देश के आर्थिक–राजनीतिक और वैचारिक स्वराज्य के लिए लड़ रहे हैं।

गांधी पश्चिम की सभ्यता को चांडाल सभ्यता कहते थे और भारतीय सभ्यता को आत्मबल पर टिकी हुई उदार चिंतनभूमि। उन्होंने 'हिंद स्वराज्य' में आत्मालोचन के साथ देश को आगे बढ़ाने की बात कही थी।

इस पूरे साहित्य की चेतना व्यक्तिपरक मूल्यों की चेतना से दूर लोकमंगलवादी मूल्यों पर केंद्रित हो जाती है। इसलिए राष्ट्रीयता का पूरा ढांचा देशभक्ति के राग में ढल जाता है।

बोध प्रश्न–1

निम्नलिखित प्रश्नों के लगभग 5–7 पंक्तियों में उत्तर दीजिए –

1. आधुनिक भारतीय साहित्य, मध्यकालीन साहित्य से किस रूप में भिन्न है?

   .....

   .....

   .....

2. आधुनिक भारतीय साहित्य की मनोभूमिका का स्वरूप क्या है ?

   .....

   .....

   .....

3. आधुनिक साहित्य का प्रबल स्वर क्या है ?

   .....

   .....

   .....

7.5 राष्ट्रीय मुक्ति चेतना की सर्जनात्मक अभिव्यक्ति

भारतीय राष्ट्रीयता की चेतना ने रचनाकार की संपूर्ण मानसिकता को प्रभावित किया। इस मानसिकता ने कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक आदि अनेक विधाओं में साम्राज्यवादी दृष्टि और आर्थिक शोषण का विरोध किया। भारतीय भाषाओं के सभी रचनाकारों ने अंग्रेजों द्वारा की जा रही लूट का विरोध, साहित्य की विभिन्न विधाओं के माध्यम से किया। इस काल में जगह–जगह अकाल और महामारियाँ फैली थी। देश के सभी प्रदेश कष्ट से भर गए। भारतेंदु, सुब्रह्मण्यम भारती, ईश्वर चंद्र विद्यासागर, केशवसुत आदि ने गद्य और पद्य के माध्यम से संकीर्ण जातीयता बचाने का स्वर ऊंचा किया। नवजागरण काल के इन रचनाकारों ने जन–सामान्य तक अपनी बात पहुँचाने के लिए साहित्य को धनवान एवं सुविधा सम्पन्न उच्च वर्ग के एकाधिकार से मुक्त करने का प्रयास किया।

7.5.1 भारतीय भाषाओं में पत्रकारिता का उदय

नवजागरण काल में भारत की सभी भाषाओं के साहित्य का मूल स्वर देश प्रेम और राष्ट्रभक्ति का जो स्वर है उसके निर्माण और जागरण सुधार चेतना के प्रसार जन–सामान्य को साहित्य और राष्ट्रीयता से जीवंत और सक्रिय रूप से जोड़ने में पत्र–पत्रिकाओं की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका है। उन्नीसवीं शताब्दी में सभी भारतीय भाषाओं में बड़ी संख्या में ऐसी पत्र–पत्रिकाएँ प्रकाशित हुई जिन्होंने भारतीय जनमानस को गहराई से उद्वेलित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी।

भारत में छापे की मशीन की शुरूआत यहाँ के जनजीवन के लिए एक क्रांतिकारी घटना सिद्ध हुई। इस घटना से राष्ट्रीय चेतना का जागरण और विकास हुआ तथा सच्चे अर्थों में

राष्ट्रीय पत्रकारिता का सर्जनात्मक रूप सामने आया। भारत में राष्ट्रीय प्रेस के संस्थापक राजाराममोहन राय थे। उनसे पहले कुछ पत्र–पत्रिकाओं की शुरूआत हुई थी किंतु 1821 में बंगला में प्रकाशित 'संवाद कौमुदी', 1822 में फारसी में प्रकाशित 'मिराल–उल–अखबार' ने राष्ट्रीय एवं जनतांत्रिक लोक जागरण की धारा का सबसे पहले प्रकाशन किया। इन पत्रों में समाज सुधार एवं धार्मिक–सांस्कृतिक समस्याओं पर गंभीर विचार होते थे। बंबई में गुजराती प्रेस से 'बॉम्बे समाचार' नामक दैनिक अखबार निकाला जिसमें लोकतांत्रिक प्रगतिशील विचारों की आवाज रहती थी। 1838 में द्वारिकानाथ टैगोर, प्रसन्न कुमार टैगोर तथा राजाराममोहन राय ने 'बंगदूत' की स्थापना की। पी. एम. मोतीवाला ने गुजराती में 'जागे जमशेद' का प्रकाशन किया। इतना ही नहीं, गुजराती के पत्र 'रस्त फतार' और 'अखबार–ए–सौदागर' नए विचारों को लेकर आए। भारतीय राष्ट्रीयता के भीष्म पितामह दादा भाई नौरोजी ने 'रस्त गोफतार' (1891) का संपादन किया। वे इंडियन नेशनल कांग्रेस के संस्थापक भी थे। इसलिए यह पत्र भारतीय राष्ट्रीयता की सामूहिक शक्ति का प्रतिनिधित्व करता था। नवजागरण के वातावरण में 1858 में समाज सुधारक और प्रबल देशभक्त ईश्वरचंद्र विद्यासागर ने बंगला में 'सोमप्रकाश' का प्रकाशन किया। राष्ट्रवादी पत्रकारिता में इस पत्र का स्थान अनेक कारणों से श्रेष्ठ है। उदाहरण के लिए बंगाल के नील पैदा करने वाले इलाकों में जब अंग्रेजी शोषण के कारण अशांति बढ़ी तब इस पत्र ने किसानों के हित के लिए डटकर समर्थन किया। धीरे–धीरे राष्ट्रवादी अखबारों की संख्या और अधिक बढ़ी। 1868 में घोष बंधुओं (हेमेंद्र कुमार, शिशिर कुमार और मोतीलाल) के प्रयासों से 'अमृत बाजार पत्रिका' की स्थापना हुई। इस पत्रिका ने राष्ट्रीय विचारों का शिक्षित वर्ग में जोरदार प्रचार किया और सरकारी नीतियों की कठोर आलोचना की। इस पर दमन चक्र का कहर भी टूटा और इसके संपादकों को जेल की सजा भुगतनी पड़ी। सुरेंद्रनाथ बनर्जी ने 'बंगाली' पत्र निकाला। यह पत्र भारतीय राजनीतिक विचारधारा के उदार दिल के विचारों का प्रचार पत्र था। श्री बनर्जी की राय से दयालसिंह मजीठिया ने 1877 में लाहौर में अंग्रेजी दैनिक 'ट्रिब्यून' की स्थापना की। इस पत्र ने पंजाब की उदारवादी राष्ट्रीय विचारधारा को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया।

धीरे–धीरे राष्ट्रवादी विचारधारा बल पकड़ने लगी और राष्ट्रीयता के नेता बाल गंगाधर तिलक, विपिन चंद्र पाल, अरविंद, लाला लाजपतराय, वीरेंद्र घोष का उदय हुआ। तिलक ने मराठी में 'केसरी' का प्रकाशन शुरू किया। इसने राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम की विचारधारा को तेज करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। तिलक ने जब 'मराठा' का प्रकाशन किया तो फिरंगी सरकार के कान खड़े हो गए और अंतः तिलक को दो बार जेल जाना पड़ा। घोष बंधुओ का पत्र 'युगांतर' उग्र राष्ट्रीयता के इतिहास का दस्तावेज है। अरविंद ने 'वन्दे मातरम' पत्र निकाला। इन पत्रों ने बंग विभाजन का विरोध किया तथा देश में विदेशी के बहिष्कार और स्वदेशी के प्रचार–प्रसार की भावना को अभिव्यक्ति दी।

भारतीय राजनीति के अनेक नेता पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से जनता की समस्याओं को खुलकर सामने लाने लगे। रामानंद चटर्जी 'मॉडर्न रिव्यू' में सामाजिक–राजनीतिक–ऐतिहासिक विषयों पर लेख निकालने शुरू किए। इन लेखों ने वैचारिक क्रांति का एक विशेष माहौल निर्मित किया। गरम दल और नरम दल के नेताओं ने चाहे वे फिरोजशाह मेहता हों या गोखले, तिलक हों या विपिन चन्द्र पाल–सभी ने लोक जागरण के लिए अपने विचारों को माध्यम बनाया। फिरोजशाह मेहता ने 'बॉम्बे क्रॉनिकल' निकाला तथा ऐनी बिसेंट का 'न्यू इंडिया' होमरूल आंदोलन का मुखपत्र बना। युद्धोत्तर काल में राजनीतिक–आर्थिक संकट मोतीलाल नेहरू अली बंधु, खिलाफत आंदोलन के नेता, सी.आर.दास आदि सभी ने मिलकर

राष्ट्रीय अपने ढंग से अभिव्यक्ति दी। गांधी जी ने 'यंग इंडिया' और 'हरिजन' को जनता की व्यथा से जोड़कर नया रूप दिया।

इसी समय काशी के शिव प्रसाद गुप्त ने हिंदी 'आज' की स्थापना की। हिंदी पत्रकारिता का एक गौरवपूर्ण इतिहास था। भारतेंदु हरिश्चंद्र 'कविवचन सुधा', 'हरिश्चंद्र मैगजीन', 'हरिश्चंद्र पत्रिका', 'बाला बोधिनी', प्रताप नारायण मिश्र 'ब्राह्मण', बालकृष्ण भट्ट 'हिंदी प्रदीप', उपाध्याय बद्री नारायण चौधरी ने 'प्रेमधन', 'आनंद कादंबिनी', 'नागरी नीरव' जैसे पत्र–पत्रिकाएँ निकाल रहे थे। इसी परंपरा में तोताराम ने 'भारत बंधु' संदानंद मिश्र ने 'सारसुधानिधि', दुर्गा प्रसाद मिश्र ने 'उचित वक्ता', केशवराम भट्ट ने 'बिहार बंधु', कार्तिक प्रसाद खत्री ने 'हिन्दी दीप्ति प्रकाश', राजा राम पाल सिंह ने 'हिंदोस्थान', अंबिकादत्त व्यास जी ने 'पीयूष प्रवाह', राधाचरण गोस्वामी ने 'भारतेंदु' आदि ने अनेक पत्र–पत्रिकाएं निकालीं। ब्रिटिश साम्राज्यवाद की नीतियों के कारण 'हिंदी प्रदीप' को कई बार बंद होना पड़ा, लेकिन संपादक ने हिम्मत न हारी और पत्र को फिर से निकाला। 'हिंदोस्थान' इंग्लैंड से निकला था और हिंदी–अंग्रेजी में छपता था। इसके संपादकों में पंडित मदनमोहन मालवीय, प्रताप नारायण मिश्र और बालमुकुंद गुप्त रहे। मालवीय जी के प्रभाव से 'अभ्युदय' जैसा पत्र निकाला जिसके महान संपादकों ने देशभक्ति और राष्ट्रीयता के विकास में महत्पूर्ण योगदान दिया। कृष्णकांत मालवीय और पं. बनारसी दास चतुर्वेदी इसके संपादक रहे। महावीर प्रसाद द्विवेदी की पत्रिका 'सरस्वती', गणेश शंकर विद्यार्थी का पत्र 'प्रताप', माखनलाल चतुर्वेदी का पत्र 'कर्मवीर' और पत्रिका 'प्रभा' जैसे देशभक्ति के पत्र निकले जिन्होंने ब्रिटिश शासन को कदम–कदम पर चुनौती दी और निरंतर दंड भी भोगा। प्रताप का कार्यालय तो क्रांतिकारियों का केंद्र बन गया। विद्यार्थी जी के आसपास भारतीय भाषाओं के नए लेखकों–पत्रकारों और स्वतंत्रता सेनानियों का एक विशाल वृत्त निर्मित हुआ जो साम्प्रदायिकता और क्षेत्रीयता का विरोध करता हुआ देशभक्ति का प्रचार करता था। प्रताप के संपादक मंडल में क्रांतिकारी भगत सिंह भी रहे। इस पत्र ने क्रांतिकारी रामप्रसाद बिस्मिल की डायरी का प्रकाशन भी किया। राष्ट्रवादी और स्वाधीनता आंदोलन के समर्थक पत्र–पत्रिकाओं की एक ऐसी अटूट श्रृंखला बनी कि श्रीकृष्णदत्त पालीवाल ने 'सैनिक' निकाला जिसमें हिंदी के अनेक रचनाकारों ने सक्रिय भागीदारी की। हिंदी 'केसरी' का प्रकाशन हुआ और माधवराव सप्रे के संपादकत्व में एक नया प्रकाश दिखाई दिया। हिंदी 'केसरी' पर मुकदमा चला और 1909 में इसे बंद हो जाना पड़ा। इसी वर्ष 'अवध केसरी' (फैजाबाद) निकला। 'मथुरा समाचार' (मथुरा) 'ज्ञान शक्ति' (गोरखपुर), 'शक्ति' (अल्मोड़ा), 'सूर्य' (काशी) जैसे अनेक छोटे–छोटे पत्र उभरे जिनकी स्वाधीनता संग्राम के परिप्रेक्ष्य में महत्वपूर्ण भूमिका रही।

प्रथम विश्व युद्ध (1914–18) के साथ ही भारत के राजनीतिक एवं सांस्कृतिक सोच में एक विशेष परिवर्तन आया। भारतीय राष्ट्रीयता के क्षेत्र में इस सोच ने नव चेतना का संचार किया। फलतः साम्राज्यवादी शक्तियों के सामने राष्ट्रवादी क्रांतिकारियों ने सशस्त्र आंदोलन शुरू किए। इसी समय गदर पार्टी का गठन हुआ। युद्धकाल में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के चार अधिवेशन हुए। तिलक के जेल से बाहर आते ही 'देशभक्ति की शक्तियाँ' सिर तानकर खड़ी हो गई। इस दौरान 'प्रताप', 'अभ्युदय', 'भविष्य', 'सरस्वती', 'भारतबंधु' "सत्यवादी', 'निर्बल सेवक', 'स्वदेश, 'ज्ञान शक्ति', 'उत्साह', 'कर्मवीर', मर्यादा जैसे पत्रों ने राजनीतिक चेतना का माहौल निर्मित्त किया। 'भारत जीवन' और हिंदी 'केसरी' राष्ट्रीय विचारधारा के प्रतीक पत्र बन गए। 'आनंद' और 'उत्साह' जैसे पत्रों ने स्वाधीनता संग्राम में जनजागरण का काम किया। महात्मा गांधी के रौलट विधेयक विरोधी आंदोलन को गति प्रदान करने के लिए सत्याग्रह सभा की स्थापना हुई। गांधी ने 17 अप्रैल 1919 को 'सत्याग्रह' नामक पत्र

का प्रकाशन किया। गांधी जी पत्र–पत्रिकाओं को वैचारिक क्रांति का माध्यम मानते थे। उनके विचारों से प्रभावित होकर स्वदेशी आंदोलन को वाणी देने के लिए गोरखपुर से 'स्वदेशी' का प्रकाशन आरंभ हुआ। इस पत्र के मुख पृष्ठ पर लिखा होता था –

'जो भरा नहीं है भावों से बहती जिसमें रसधार नहीं
वह हृदय नहीं है पत्थर है जिसमें स्वदेशी का प्यार नहीं।'

संपादकीय स्तंम्भ में स्वदेश का नीति सिद्धांत था :

'स्वर्गालय के लिए आत्मबलि हम न करेंगे
जिस स्वदेश में जिए उसी पर सदा मरेंगे'

'स्वदेश' अपने इस संकल्प का जीवनपर्यन्त स्वाधीनता आंदोलन में शंखनाद करता रहा। गांधी जी ने राष्ट्रीय चरित्र को बल प्रदान किया। फलतः प्रताप के राष्ट्रीय अंक में बलिदान की प्रेरणा–भरी अनुगूंज सुनाई दी 'चाँद' पत्रिका का फाँसी अंक निकाला, जिसका भारतीय राष्ट्रीयता के इतिहास में अपार नाम है।

ऐसा माहौल बना कि 1919 में लगभग 170 छापाखानों और पत्र–पत्रिकाओं से जमानतें माँगी गई। 'बाम्बे क्रॉनिकल' के प्रसिद्ध संपादक बी.जी. हार्निमेन को पंजाब सरकार की आलोचना करने के कारण देश से निर्वासित कर दिया गया। 'अमृत बाजार पत्रिका', 'ट्रिब्यून', 'पंजाबी', 'हिंदू' और 'स्वदेश मिलन' जैसी विभिन्न भाषाओं के देश प्रसिद्ध पत्रों से भारी जमानतें ली गई और दमनकारी जब्तियाँ हुई। इनका प्रकाशन रोका गया और संपादकों को सजाएं दी गई। पंजाब में प्रेस एक्ट को बड़ी कठोरता से लागू किया गया एक हिंदी साप्ताहिक 'स्वदेश' भी था। 'प्रताप', 'अभ्युदय', 'अवधवासी', 'भारत मित्र', 'भारत बंधु' आदि पत्रों ने प्रेस अधिनियम के विरूद्ध विरोध प्रदर्शित किया और प्रतिबंधों के बावजूद नई पत्र–पत्रिकाएं निकली जैसे – 'संसार' (कानपुर), 'बिजली' (इटावा), 'किसान' (फतेहपुर), 'सेवा' (प्रयाग), 'हिमालय' (रानीखेत, अल्मोड़ा) जैसे पत्रों का प्रकाशन हुआ। 1920 में गणेशशंकर विद्यार्थी ने हिंदी की सचित्र मासिक राजनीतिक पत्रिका 'प्रभा' का प्रकाशन किया। इस पर लिखा होता था :

'आओ कर्मक्षेत्र में आओ उन्नति बाधा चलो हटाओ
बहुत दिनों से रुके पड़े हो मृतक तुल्य ही झुके पड़े हो
अंधकार को तोड़ विश्व में दिव्य प्रभा दिखलाओ
आओ कर्मक्षेत्र में आओ।'

गणेशशंकर विद्यार्थी के जेल जाने पर श्रीकृष्णदत्त पालीवाल, माखनलाल चतुर्वेदी और बालकृष्ण शर्मा नवीन ने 'प्रभा' का संपादकत्व संभाला और निर्भय स्वर से देशभक्ति को वाणी दी। भारतीय राष्ट्रीयता के इस नवजागरण काल में ही हिंदी दैनिक 'आज' का प्रकाशन हुआ। भारतीय पत्रकारिता के इतिहास में इसका प्रकाशन एक युगांतकारी घटना कही जाती है। मातृभूति की सेवा के लिए तो यह पत्र जन्मा ही था। घोषणा में लिखा गया था :

'हमारा उद्देश्य अपने देश के लिए सभी प्रकार से स्वातंत्रय उपार्जन है। हम हर बात में स्वतंत्र होना चाहते हैं। हमारा लक्ष्य यह है कि हम अपने देश का गौरव बढ़ावें, अपने देशवासियों में स्वाभिमान का संचार करें उन्हें ऐसा बनावें कि भारतीय होने का उन्हें अभिमान हो संकोच नहीं। भाइयों। भूलो मत यह स्वाभिमान स्वतंत्रता देवी की उपासना करने से मिलता है।'

'आज' के आरंभिक संपादक श्री प्रकाश एवं बाबू राव विष्णु पराड़कर थे। श्रीप्रकाश पर गांधीवादी आदर्शों का प्रभाव था और पराड़कर जी पर तिलक के राजनीतिक दर्शन का। लोकमान्य से आर्शीवाद लेने वे पूना भी गए। इसी समय गांधीवादी आदर्श का पत्र कानपुर से दैनिक 'वर्तमान' निकला। इस पत्र पर लिखा होता था –

भारत के हम और हमारा भारत प्यारा
स्वतंत्रता है जन्मसिद्ध अधिकार हमारा

इसी समय 'श्रद्धा' (बिजनौर), 'सुधाकर' (आगरा) जैसे पत्र निकले। देश के किसान आंदोलन को जहाँ अंग्रेजी के पत्र चुप्पी साधकर छिपाते थे, वहाँ भाषाओं की पत्र–पत्रिकाएं जोखिम उठाकर किसानों की आवाज को बुलंद करतीं। अवध के कई जिलों में बाबा रामचंद्र की अगुआई में किसानों ने विद्रोह किया। इसमें रायबरेली के किसानों का विद्रोह भारतीय इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना है। सरकार ने दमनात्मक कार्रवाई की। 'प्रताप' में गणेश शंकर विद्यार्थी ने 'डायरशाही और ओ डायरशाही' शीर्षक लेख से इस आंदोलन को जन–जन में फैलाया।

भारतीय पत्रकारिता का, विशेषकर हिंदी पत्रकारिता का, उत्तरोत्तर विकास हुआ। 'ब्रजवासी', 'विशाल भारत', 'लोकमान्य', 'लोकवार्ता', 'विक्रय', 'निर्भय', और 'परिवर्तन' जैसे पत्र निकले। इन पत्रों पर निरंतर सरकार का कोप जारी रहा। लेकिन स्वाधीनता आंदोलन में भारतीय पत्र–पत्रिकाओं ने रुकना या झुकना कभी न सीखा। राष्ट्रीयता और राष्ट्रीयतापरक साहित्य के विकास में इन पत्र–पत्रिकाओं का अमूल्य योगदान है। इन पत्र–पत्रिकाओं ने मजदूरों–किसानों के आंदोलनों का विस्तार किया तथा राष्ट्रीय स्वाधीनता के लिए कांग्रेस और समाजवादी–साम्यवादी मतावलंबियों द्वारा चलाए जा रहे आंदोलन को अभिव्यक्ति दी।

7.5.2 नाटक

दृश्य माध्यम होने के कारण नाटक का प्रभाव साहित्य की अन्य विधाओं की तुलना में अधिक शीघ्र और गहरा होता है। आधुनिक युग में जन–जागरण करने के लिए ऐसे नाटकों का लेखन और प्रदर्शन होने लगा जिससे जनता अंग्रेजों के असली इरादों को समझ सके और उसके भीतर प्रबल देशभक्ति की भावना पैदा हो। असमिया का नाटक 'जयमती' में राष्ट्रीय चेतना और देश–प्रेम स्पंदित है तो तेलुगु में साम्राज्यवाद के विरोध का स्वर, वेद वेंकट रामशास्त्री के नाटक 'प्रताप रूद्रीयम' में मिलता है। ऐतिहासिक सांस्कृतिक कथानकों को आधार बनाकर अंग्रेजी शासन के विरूद्ध आवाज उठाने वाले अनेक नाटककार और नाटक सामने आए। भारतेंदु के 'नीलदेवी','सत्य हरिश्चंद्र', जयशंकर प्रसाद के 'स्कंदगुप्त', 'चंद्रगुप्त', 'अजातशत्रु', श्रीनिवासराव के 'रामानुज चरित' (तेलुगु), यज्ञनारायण शास्त्री के 'रसपुत्र' विजयक (तेलुगु) मराठी में कीर्तने का माधव राव पेशवा', हिंदी में राधाचरण गोस्वामी के ' अमरसिंह राठौर', तमिल में 'बुद्ध अवतारम', गुजराती में लीलावती मुंशी के 'कुमारदेवी' में इतिहास के माध्यम से राष्ट्रीयता के उदबोधन का स्वर है। बीसवीं शताब्दी के तीसरे और चौथे दशक में नाटकों में साम्राज्यवाद विरोधी चेतना और तेज होती गई।

द्विवेंद्र लाल राय के नाटकों ने विभिन्न भाषा के नाटककारों को प्रभावित किया। ऐतिहासिक, पौराणिक काल्पनिक कथाओं पर आधारित नाटकों के साथ–साथ भारतीय भाषाओं की लोक नाट्य परंपरा में भी एक नई राष्ट्रीय दृष्टि पैदा हुई। रामलीला, रासलीला, जात्रा, अंकिया नाट, यक्षगान, संगीतक, भांड, नौटंकी, कीतर्निया, कुटियाट्टम, भवई आदि लोक नाट्य जीवंत्ता से उभरे लेकिन सर्वाधिक लोकप्रिय बंगला की जात्रा हुई। कन्नड़ की यक्षगान

परंपरा ने संस्कृत के नाटकों का सहारा लेकर धर्म और संस्कृति के माध्यम से राष्ट्रीयता को उद्‌बोधित किया। यक्षगान से प्रेरणा पाकर विष्णुदास भावे ने मराठी में 'सीतास्वयंबर' प्रस्तुत किया। यह स्थानीय लोक शैलियों पर आधारित था। फिर यह परंपरा ऐसी चली कि बलवंत पांडुरंग अण्णा साहब किर्लोस्कर, श्रीपाद कृष्ण कोल्हटकर, गोबिंद वल्लभ देवल, पु.ला. देशपांडे आदि के नाटक सामने आए। तमिल में लोक–नाट्यों के विषय पौराणिक रहे जैसे 'कुपल्लि कुरूबंबी'। दरअसल भारतीय रंगमंच के माध्यम से जनजागरण की चेतना ने पूर्व में कलकत्ता, पश्चिम में सूरत और बंबई तथा दक्षिण में मद्रास को अपना केंद्र बनाया। कलकत्ता में लेवेडेफ ने बंगाली थियेटर की स्थापना की। आरंभ में, थिएटर मनोरंजन के लिए थे, लेकिन कालांतर में उन्होंने राष्ट्रीय जागरण में भूमिका निभाई।

माइकेल मधुसूदन दत्त का नाटक 'पद्मावती', 'शर्मिष्ठा', असमिया में 'सीताहरण', 'सीतास्वयंबर', तेलुगु में' पांचाली परिण्यम्', तेलुगु में 'धर्मवरम कृष्णया चारीयुल' तथा शंकरदास स्वाभिक्कल के अधिकांश नाटक, मराठी में विष्णुदास भावे के पौराणिक नाटकों ने यह कार्य बड़ी सफलता से किया। इनके माध्यम से भारतीय जातीय पहचान उभरी। बंगला में गिरीशचंद्र घोष ने ऐतिहासिक नाटक लिखे। इस परंपरा को द्विजेंद्रलाल राय ने राष्ट्रीय उद्‌बोधन के स्वर में बदल दिया। उनका प्रसिद्ध नाटक 'चंद्रगुप्त' है। इस परंपरा को हिंदी में जयशंकर प्रसाद, हरिकृष्ण प्रेमी, गुजराती में उमाशंकर जोशी, के.एम.मुंशी, मलयालम में कृष्ण पिल्लै आदि ने आगे बढ़ाया। इतिहास की आंख से अपने वर्तमान को देखने की प्रवृत्ति प्रेरणादायी सिद्ध हुई। बंगला में अमृतलाल बाऊ का प्रहसन 'कृष्णेरधन', भारतेंदु का प्रहसन 'अंधेर नगरी', राधाचरण गोस्वामी का प्रहसन 'तन–मन–धन गोसाई जी के अर्पण' आदि ऐसे नाटक हैं जो सामाजिक कुरीतियों और भ्रष्टाचार पर कटाक्ष करते हैं। असमिया के नाटकों में राष्ट्रीय चेतना का वही रूप उभरता मिलता है जैसा डी.एल. राय के नाटकों में था। लक्ष्मीनाथ बेजबरुआ कृत 'चक्रध्वज सिंह', विमलानंद बरुआ कृत 'शराई घाट', नकुल भुइयाँ कृत 'विद्रोही मरण' में राष्ट्रीय नवजागरण को सुधारवादी और आदर्शवादी दृष्टि से प्रस्तुत किया गया है। बंगला में रवीन्द्रनाथ ठाकुर के नाटक 'रक्तकरबी', 'डाकघर', 'राजा', हिंदी में हरिकृष्ण प्रेमी के 'रक्षाबंधन', 'स्वप्नभंग', 'प्रतिशोध', सिंधी में खानचंद दरियानी के 'मुखरी', 'भूखा जो शिकार', 'जमींदारी जुल्म' नाटकों ने सामंतवादी शोषण के खिलाफ विद्रोही दृष्टि पैदा करने वाले नाटक लिखे। हास्य और व्यंग्यपरक नाटक और प्रहसन लिखे गए। इन प्रहसनों में बहुत से लोक साहित्य के रूप मिले रहते थे।

7.5.3 कथा साहित्य

राष्ट्रीय धारा के प्रतिनिधि नाटकों के साथ–साथ ऐसे उपन्यास भी हमारे सामने आए जिन्होंने सांस्कृतिक–सामाजिक, नवजागरण जन–जन तक पहुँचाने का कार्य किया। प्रेमचन्द, बंकिम, रवींद्रनाथ टैगोर, पामा वरेरकर (मराठी), वेदनायक पिल्लै (तमिल), रतननाथ सरसार (उर्दू–उपन्यास 'फसान–ए–आजाद'), मिर्जा मोहम्मद हादी ससवा ('उमराव जान अदा') आदि के उपन्यासों में भारतीय उपनिवेशवाद और सामंतवाद से उत्पन्न स्थितियाँ उन विचारों को हमारे सामने केंद्रित करती हैं जिनमें मनुष्य पराधीन भारत में एक घुटन का अनुभव कर रहा था। मिर्जा कलीज वेग का सिंधी उपन्यास 'जीनत' और भाई वीरसिंह देव की कथाकृति 'सुंदरी' उस आदर्शवाद की ओर उठता हुआ कदम है जिसमें देश का मन अपनी आंतरिक शक्ति को खोल देना चाहता है। कन्नड़ लेखक वेंकट राव का उपन्यास 'इन्दिरा बाई', हरिनारायण आप्टे का उपन्यास 'मझली स्थिति' और चतुरसेन शास्त्री का उपन्यास 'वैशाली की नगर वधू' सामाजिक पाखंड का नहीं उस सामाजिक दर्द का विस्फोट है जिसे भारतीय समाज सह रहा था। हिंदी में प्रेमचंद व्यापक स्तर पर सामाजिक पाखंडों का निर्ममता के

साथ भंडाफोड़ करते हैं। 'वरदान', 'प्रतिज्ञा', 'सेवासदन' से लेकर 'प्रेमाश्रम', 'सेवासदन', 'कायाकल्प', 'निर्मला', 'गबन', और 'गोदान' भारतीय समाज में घटित हो रहे अनाचार और अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठाते हैं। स्वयं जयशंकर प्रसाद के उपन्यास 'कंकाल' और 'तितली' धर्म और समाज के ठेकेदारों के पाखंडों का खोखलापन सामने लाते हैं। भगवतीचरण वर्मा का 'चित्रलेखा' पाप–पुण्य की कृत्रिमता पर प्रहार कर उस ओर बढ़ता है जहाँ जीवन के आस्थावादी मूल्य संचित हैं। श्री केलकर ने 'पैरांगदा' (भगोड़ा) में उन शिक्षित युवकों की समस्या को लिया जो पश्चिम के रंग में बहना चाहते हैं। रवींद्रनाथ ने 'घरे बाहिरे' में सामाजिक मूल्यों में संघर्ष की योजना के द्वारा भारतीय समाज की मनोदशा को चित्रित किया। खांडेकर ने 'कंचन मृग' और उपेंद्रनाथ अश्क ने 'गिरती दीवारें', जैनेंद्र ने 'त्यागपत्र' और 'सुनीता' में नारी वेदना को एक जटिल समस्या के रूप में प्रस्तुत किया। कहना न होगा कि भारतीय स्वाधीनता आंदोलन के दिनों में जितने सामाजिक–सांस्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक सुधार आंदोलन उठे थे–चाहे वे सती प्रथा, बाल विवाह, अशिक्षा, अंधविश्वास, अस्पृश्यता, जाति प्रथा, क्षेत्रीयता, हिंदू–मुस्लिम समस्या आदि किसी भी विषय से संबंधित हो–भारतीय साहित्य ने उन पर गहराई से विचार किया।

भारतीय कहानी ने बंगला में अपना सफलतम रूप रवींद्रनाथ टैगोर में देखा था। हिंदी में प्रेमचंद उस कहानी को सामने लाते हैं जो भारतीय समाज पर गांधीवादी प्रभाव की संपूर्ण स्थिति–परिस्थिति प्रस्तुत करती है। प्रेमचंद के उपन्यास कहानियाँ–'पूस की एक रात' हो अथवा 'पंच परमेश्वर', असमिया के दीनानाथ शर्मा की 'मृत्युहीन मृत्यु', झबेर चंद मेघाणी की कहानियाँ, तमिल में कालकी और राजाजी की कहानियाँ सुधार और देशभक्ति की भावनाओं से भरपूर हैं। तेलगु के अडवी बापिराज ने छुआछूत को दूर करने वाली कहानियों लिखी। राष्ट्रीय चेतना की प्रखर अभिव्यक्ति के रूप में प्रसाद ने 'पुरस्कार', 'आकाशदीप', 'गुंडा' आदि कहानियाँ लिखी। भारतीय भाषाओं में मार्क्सवादी चिंतन और फ्रायड से प्रेरित कहानियाँ भी लिखी गई। यशपाल, राहुल सांकृत्यायन, राजेंद्रसिंह बेदी, कृश्णचंदर और मंटो ने कहानी का जो रूप प्रस्तुत किया वह भारतीय समाज को भीतर से शक्ति देने वाला है। मनुष्य में अखंड आस्था और उसकी संभावनाओं की तलाश हमारी संवेदना की आंतरिक पुकार थी जिसे भारतीय कहानी ने एक व्यापक स्तर पर पूरा किया।

7.5.4 कविता

साम्राज्यवादी लूटतंत्र और देशभक्ति की सबसे प्रबल अभिव्यक्ति कविता में हुई। इस कविता ने व्यक्तिपरक मूल्यों की चेतना से दूर मानवतावादी करूणामूलक लोक मंगलमय और समष्टिपरक चेतना का विस्तार किया। विदेशी आक्रांताओं के सामने भारतीय वीरों ने कभी हिचक नहीं दिखाई। राजपूतों, मराठों, बुदेंलों, कल्चुरियों का इतिहास साक्षी है कि उन वीरों ने अपनी क्षेत्रीय सीमाओं से उठकर देश की रक्षा के लिए संघर्ष किया था। कवियों ने इनकी वीरता को काव्य का विषय बनाया और उनमें देशभक्ति की एक नई शक्ति पैदा की। उदाहरण के रूप में सुभद्रा कुमारी चौहान की कविता 'झाँसी की रानी', श्यामनारायण पांडेय की 'हल्दी घाटी' 'जौहर' को देखा जा सकता है।

इस पूरे भारतीय साहित्य में भारत मातृभूमि के रूप में उदित हुआ। इसी चेतना के भीतर से बंकिम चंद्र चटर्जी का गान फूट पड़ा –

बंदे मातरम्
सुजलाम् सुफलाम् मलयज शीतलाम्
शस्य श्यामलाम् मातरम।

('आनंदमठ' उपन्यास में 1882)

इस गीत ने जैसे पूरे देश की चेतना को वाणी दी और यह भारतीय राष्ट्रवादियों का स्वरगीत बनता गया। श्री अरविंद इस गीत से इतने आंदोलित हुए कि इसका उन्होंने गद्य और पद्य में अंग्रेजी रूपांतर प्रस्तुत कर डाला। यह गीत अरविंद के पत्र 'बंदे मातरम' की प्रेरणा भी बना। इस गीत में भारतीय संस्कृति की विशिष्ट निधि इस अर्थ में है कि इसने भारतीय जन–मानस में जन्मभूमि के लिए एक नया भावबोध उत्पन्न किया। इस गीत का विशिष्ट गौरव यह है कि जन–गण–मन गीत के रचनाकार रवींद्रनाथ टैगोर ने इसे बार–बार राष्ट्रीय मंचों पर गाया। लार्ड कर्जन ने बंगाल विभाजन नीति की घोषणा की तो इसी गीत ने संघर्ष का नया शंखनाद किया। विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार और स्वदेशी आंदोलन की प्रेरणाभूमि में भी यही गीत समाहित रहा।

अनेक देशभक्त बंदे मातरम का मंत्र जपते–जपते फाँसी पर झूल गए। इस प्रकार राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक स्वाधीनता की ओर पूरे देश को इस गीत ने प्रेरित किया। अंग्रेजों ने इस गीत के गायन पर प्रतिबंध लगा दिया। वाराणसी में गोपाल कृश्ण गोखले सन् 1905 में कांग्रेस की अध्यक्षता कर रहे थे, उस समय टैगोर की भतीजी प्रसिद्ध गायिका सरला देवी ने जनता के आग्रह पर इस गीत को जोखिम उठाकर गाया। इसे सुनकर राष्ट्र–वीरों में नया उत्साह पैदा हुआ। साम्राज्यवाद का क्रूर चेहरा साफ खुल गया। गाँधी ने असहयोग आंदोलन शुरू किया और उस दौर में बंदे मातरम फिर गूंज उठा। कहना न होगा कि इस गीत से प्रेरणा पाकर भारतीय भाषाओं में राष्ट्र प्रेम की अनेक कविताएं लिखी गईं। तमिल के सुब्रह्मण्यम भारती इस गीत से अत्यधिक प्रभावित हुए। इसी गीत की प्रेरणा ने हाली, शिवली, इकबाल, केशवसुत, वामन, तिलक, वल्लतोल, भारतीदासन, मैथिलीशरण गुप्त, रामनरेश त्रिपाठी, माखनलाल चतुर्वेदी, नवीन और दिनकर को राष्ट्रीयता का एक नया राग दिया। जयशंकर प्रसाद देशभक्ति की समय शक्ति को पहचानते हुए 'अरूण यह मधुमय देश हमारा', 'हिमाद्रि तुंग शंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती/स्वयंप्रभा समुज्जवला स्वतंत्रता पुकारती' जैसे प्रेरणादायक गीत लिखे। सूर्यकांत त्रिपाठी निराला ने लोक जागरण के इस स्वर को पहचानते हुए 'जागो फिर एक बार', 'राम की शक्ति पूजा' 'तुलसीदास' 'एक बार बस और नाच तू श्यामा' जैसी रचनाओं की सृष्टि की। पंडित रामनरेश त्रिपाठी ने साम्राज्यवादी लूटतंत्र का भंडाफोड़ करने के लिए 'पथिक' काव्य लिखा –

'शासकगण असहाय प्रजा को घोर कष्ट देता है
रक्षक से भक्षक बनता है सर्वस हर लेता है
लाखों नहीं करोड़ों ऐसे हैं मनुष्य दुख पाते
जीवन भर जो जठरानल में जल जलकर मर जाते।
हाय–हाय कर लोग साँझ को निराहार सो जाते
एक बार भी रात–दिवस में पेट नहीं भर पाते
चिंतित है, आश्चर्यचकित हैं, कृषक विकल है दुख से
कौन छीन लेता है उनका कौर अचानक मुख से।'

(पथिक)

इसी काव्य में कवि साम्राज्यवादी लूटतंत्र से मुक्ति पाने के लिए कहता है–

तुम अपने सुख के स्वराज्य के हो न पूर्ण अधिकारी
यह मनुष्य पर कलंक है हे प्रिय बंधु तुम्हारी

दुखदायी शासन से अपनी सारी शक्ति हटा लो
निज सुख दुख का अपने ऊपर सारा भार संभालो
अपना शासन आप करो तुम यही शांति है सुख है
पराधीनता से बढ़ जग में नहीं दूसरा दुख है।

गांधी के आने से जो नया विचार मंथन पैदा हुआ था उसकी अभिव्यक्ति मैथिलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्वेदी और नवीन में अत्यंत शक्तिमान सर्जनात्मकता के साथ हुई। गुप्त जी की 'भारत भारती' और 'जयद्रथ वध', माखनलाल चतुर्वेदी की 'कैदी और कोकिल', 'जवानी', 'मैं हूँ एक सिपाही', 'एक पुष्प की अभिलाषा ('हिमतरंगिणी', 'हिमकिरीटिनी' काव्य संग्रहों की कविताएँ) तथा नवीन जी के 'हम विषपायी जन्म के' काव्य संग्रह की कविता 'कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ', दिनकर की 'रेणुका' और 'हुंकार' आदि रचनाओं ने राष्ट्र के तेजोदीप्त स्वाभिमान को वाणी दी। 'भारत भारती' में उद्‌बोधन का स्वर अधिक है और 'जयद्रथ वध' में अधिकार के लिए संघर्ष का। चतुर्वेदी जी के काव्य में युग की पूरी मुक्ति कथा का जन इतिहास है। 'पुष्प की अभिलाषा' कविता में उन्होंने लिखा है–

चाह नहीं मैं सुरबाला के गहनों में गूंथा जाऊं
चाह नहीं प्रेमी माला में बिंध प्यारी को ललचाऊं
चाह नहीं सम्राटों के शव पर हे हरि डाला जाऊं
मुझे तोड़ लेना वनमाली उस पथ पर तुम देना फेंक
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने जिस पथ जाएं वीर अनेक।

जैसे हिंदी में गया प्रसाद शुक्ल स्नेही, सियारामशरण गुप्त, रामनरेश त्रिपाठी, माखनलाल चतुर्वेदी, प्रसाद, निराला और दिनकर की एक पूरी पीढ़ी देश–प्रेम, बलिदान और आस्था के गान गाती रही है, वैसे ही एक पूरी पीढ़ी उर्दू कविता में भी दिखाई देती है।

मिर्ज़ा गालिब और बहादुरशाह ज़फर की कविता में एक स्वर पूरी तड़प के साथ फूटता है–

जो बिगड़ गया वो नसीब हूँ
जो उजड़ गया वो दयार हूँ

(ज़फर)

दिल्ली की मरती आत्मा के शोक से जो तड़प के साथ दर्द उठा था उसकी प्रतिक्रिया उर्दू कविता का राष्ट्रीयतावादी नवजागरण प्रकट हुआ। अमीर मीनाई ने 'मिरातुल गैब' और 'सनम खाना–ए–इश्क' जैसे काव्य संग्रहों में राष्ट्रीय स्वर को बुलंद करते हुए लिखा –

तीर खाने की हवस है तो जिगर पैदा कर
सर फरोशी की तमन्ना है तो सर पैदा कर

सर फरोशी की तमन्ना संपूर्ण भारतीय कविता की एक प्रवृत्ति ही बन गई। क्रांतिकारी वीर भगतसिंह का एक नारा ही एक गीत बन गया –

सर फरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है
देखना है जोर कितना बाजू–ए–कातिल में है।
वक्त आने पर बता देंगे तुझे ओ आसमाँ
हम अभी से क्या बताएं क्या हमारे दिल में है।

नौरोजी और तिलक की गरमदलीय विचारधारा ने भगतसिंह, राजगुरू, असफाक और बिसमिल आदि की कुरबानी में जोश दिया। नई चेतना का जो बीज भारतेंदु, हाली, भाई वीर सिंह और वीरेश लिंगम में पैदा हुआ था उसी आवाज को आगे चलकर नज़ीर और अकबर इलाहाबादी ने उठाया। मौलाना शिवली ने अंग्रेजों को संबोधित करते हुए लिखा–

ये माना तुम्हें तलवारों की तेजी आजमानी है
हमारी गरदनों पर होगा इसका इतिहाँ कब तक
सुनाएं तुम को अपने दर्दे दिल की दासताँ कब तक
मिटाओगे हमारा इस तरह नामों निशां कब तक।

मौलाना मोहम्मद हुसैन आजाद ने देशभक्ति और सुधार आंदोलनों का सर उठाते हुए कहा–

हिम्मत के शह सवार जो घोड़े उठाएंगे
दुश्मन फलक भी होंगे तो सर को झुकाएंगे
तूफान बुलबुलों की तरह बैठ जाएंगे
नेकी के दौर उठ के बदी को दबाएंगे

मुस्लिम लीग और हिंदू महासभा के माध्यम से अंग्रेज 'फूट डालो और राज करो' तथा एक तबाह कर देने वाली साम्प्रदायिकता को फैला रहा था। अंग्रेजों की इस पूरी नीति की पोल खोलते हुए अकबर इलाहाबादी ने लिखा कि इस देश को गांधी ही बचा पाएंगे क्योंकि उनपर जनता का अथाह विश्वास है।

मदस्बा ख्वाहे गवर्मेन्ट अकबर अगर न होता
उसको भी आप पाते गांधी की गोपियों में

उर्दू कविता की यही आवाज दुर्गा सहायक सुरूर, ज्वाला प्रसाद वर्क, चकबस्त के काव्य में पाते हैं। स्वयं इकबाल इस दौर में हिमालय पर कविता लिख रहे थे। इसी दौर में दिनकर की हिमालय को संबोधित कविता बहुत प्रसिद्ध हुई।

राष्ट्रीय कविता के इस दौर में अजीब घटना घटी कि सिंधी की सूफीवादी कविता वेदांत से निकलकर सशक्त राष्ट्रवाद का स्वर अपनाने लगी। किशनचंद तीरथदास खत्री बेबस ने कांग्रेस आंदोलन का अपनी कविताओं से प्रचार शुरू किया। मराठी राष्ट्रीय सांस्कृतिक कविता का इतिहास 'तूतारी' (तुरही), 'नवा सिपाही', 'निशान' (झंडा) 'मूर्ति भंजन', 'स्फूति', 'गोपन' आदि क्रांति गीतों से जन–जन को देशभर में जगाती रही।

वामन, तिलक, रामचंद्र तांबे आदि ने भारत के इतिहास के साथ महाराष्ट्र की वीर वंश परंपरा का काव्यानुवाद प्रस्तुत किया।

7.5.5 गद्य साहित्य : जीवनी, आत्मकथा, निबंध

राष्ट्रीय चेतना के विकास में जीवनी और कथा साहित्य के साथ निबंध चिंतन परंपरा का योगदान अविस्मरणीय है। सभी भारतीय भाषाओं में नौरोजी, तिलक, गांधी और मार्क्स की जीवनियाँ और संस्मरण छपे। स्वयं गांधी की 'आत्मकथा', राजेंद्र प्रसाद की 'आत्मकथा', लाला लाजपतराय की जीवनी ने स्वाधीनता आंदोलन की विचार भूमि से जनता को परिचित कराया। राहुल जी ने मार्क्स और लेनिन की जीवनियाँ लिखीं। नेहरू ने 'भारत की खोज' लिखकर भारतीय जनता को इतिहास के प्रति नई दृष्टि दी। अनेक लोगों ने रानी दुर्गावती,

रानी लक्ष्मी बाई, 'पन्ना दाई' आदि भारतीय वीरांगनाओं के जीवन चरित्र लिखे। 1917 में प्रकाशित एक अनूदित उपन्यास के अंत में एक विज्ञापन दिया गया 'वीर चरितावली' शीर्षक से एक विचारमाला पढ़िए। बंकिम चंद्र चटर्जी ने कृष्ण चरित्र लिखा। राष्ट्रवादी वीरों में इसकी बड़ी ख्याति हुई। हिंदी के प्रसिद्ध लेखक पंडित जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी ने 1913 में इसका अनुवाद प्रकाशित कराया। सखाराम गणेश दंडेरकर के 'बीरेंद्र बाजीराव' का हिंदी अनुवाद हुआ। राजा राममोहन गोकुल ने 1917 में काशी नागरी प्रचारिणी सभा से 'नेपोलियन बोनापार्ट' शीर्षक से जीवनी प्रकाशित की। रामचंद्र वर्मा ने महात्मा गांधी, पंडित संपूर्णानंद ने देशबंधु चित्तरंजनदास, रामलाल वर्मा ने बालगंगाधर तिलक का जीवन चरित्र प्रकाशित किया। लाला लाजपतराय द्वारा उर्दू में लिखित 'गुइसप मैजिनी' का जीवन चरित्र बाबू केशवप्रसाद सिंह ने हिंदी में अनुवाद करके प्रकाशित कराया। इसके अतिरिक्त सुखसंपत्तराय भंडारी ने 'डॉ. सर जगदीश चंद्र बसु और उनके अविष्कार' शीर्षक से संक्षिप्त जीवनी प्रकाशित की, जिसका प्रकाशन मध्य भारत पुस्तक एजेंसी, इंदौर ने 1919 में किया। नवजागरण काल में स्वामी दयानंद, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी रामतीर्थ, स्वामी श्रद्धानंद आदि की परिचयात्मक जीवनियाँ प्रकाशित हुई। आर्य समाज से संबंधित धार्मिक नेताओं की जीवनियाँ इन्द्र विद्या वाचस्पति ने लिखीं। बंगाल के क्रांतिकारी यतींद्रनाथ दास की संक्षिप्त जीवनी प्रकाशित हुई। इन्हीं दिनों अलीपुर बम केस में अन्यतम अभियुक्त उपेंद्रनाथ बनर्जी की आत्मकथा बंगला में 'निर्वासितेर आत्म कहानी' नाम से प्रकाशित हुई। इसका हिंदी अनुवाद उमादत्त शर्मा ने राजनीतिक षडयंत्र शीर्षक से प्रस्तुत किया। सीताराम चतुर्वेदी ने महामना पंडित मदनमोहन मालवीय शीर्षक से जीवनी (1937) में प्रकाशित की। पूरे देशभर में इस जीवनी का विशेष प्रभाव पड़ा क्योंकि मालवीय जी का नाम शिक्षा और विश्वविद्यालय के साथ जुड़ा था। कार्ल मार्क्स की रामवृक्ष बेनीपुरी द्वारा लिखित जीवनी तथा लाल बहादुर शास्त्री कृत 'श्रीमती क्यूरी' बहुत प्रसिद्ध हुई। इस प्रकार जीवनी और आत्मकथा साहित्य ने भारतीय जनता को नवीन तथ्यों से परिचित कराया। प्रसिद्ध पत्रकार बनारसीदास चतुर्वेदी ने देशभक्तों के अविस्मरणीय संस्मरण लिखें। यह पुस्तक 'संस्मरण' शीर्षक से प्रकाशित है। भवानीदयाल संन्यासी की पुस्तक 'गांधीजी के संस्मरण' भारतीय संस्मरण साहित्य को विशेष देन है। मन्मथनाथ गुप्त की पुस्तक 'क्रांति युग के संस्मरण' (1937) श्रीराम शर्मा की 'सन बयालीस के संस्मरण', विष्णु प्रभाकर की पुस्तक 'हम जिनके प्रहरी हैं' स्वाधीनता संग्राम के विशेष क्षेत्रों से संबंधित है।

भारतीय निबंध साहित्य ने विचारधारा के धरातल पर भारतीय मनुष्य को मुक्ति चेतना के लिए तैयार किया। ज्यादातर निबंध कुरीतियों और राजनैतिक, धार्मिक और आर्थिक अत्याचारों पर लिखे गए। असमिया में हेमचंद्र बरूआ का 'बहिरे रंगछंग भीतरे कौआभातरी' समाज की कुरीतियों पर तीखा व्यंग्यपरक निबंध है। बंगला में अक्षय कुमार दत्ता और ईश्वरचंद्र विद्यासागर ने झूठे मूल्यों पर प्रहार करते हुए नारी जागरण से संबंधित निबंध लिखे। गुजराती निबंध के प्रवर्तक दलपतराय और नर्मद ने सामाजिक कुरीतियों पर निबंध लिखे। हिंदी में भारतेंदु प्रताप नारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, बालमुकुंद गुप्त, महावीर प्रसाद द्विवेदी, माखनलाल चतुर्वेदी और माधव प्रसाद मिश्र के निबंधों ने एक नया विचार जगत पैदा किया। बालमुकुंद गुप्त ने 'शिव शंभु के चिट्ठे' लिखकर अंग्रेजी साम्राज्यवाद पर तीखा प्रहार किया। आगे चलकर इसी तरह का काम माधव राव सप्रे. विष्णु चिपलुणकर तथा महावीर प्रसाद द्विवेदी ने अपने निबंधों में किया। तमिल में वीरासामी चेट्टियार और बी.जी. सूर्यनारायण शास्त्री, अडिगल के नाम उल्लेखनीय हैं। इन निबंधकारों ने सामाजिक बुराइयों के प्रति सावधान करते हुए समाज सुधार और देशभक्ति का भाव जागृत किया। तेलगु में वीरेशलिंगम के निबंध देशभक्ति की प्रेरणा थे। बालमुकुंद गुप्त, बालकृष्ण भट्ट, प्रताप

नारायण मिश्र, अध्यापक पूर्ण सिंह, बाबू गुलाब राय की तरह कन्नड़ में ए.एन. मूर्तिराव तथा वी. सीतारामइया ने निबंध लिखे। मलयालम के निबंधकार राजाराम वर्मा ने साहित्य, विज्ञान और मानविकी के ऐसे विषयों पर निबंध लिखें जिन्होंने जनता के सोचने–समझने के स्तर को ऊपर उठाया। स्वाधीनता संग्राम के दिनों में निकलने वाली सभी पत्र–पत्रिकाएं विचारात्मक निबंधों को प्रकाशित करती थीं और इन निबंधों ने भारतीय व्यक्ति को एक ऐसी विचारभूमि प्रदान की जिसमें स्वदेशाभिमान और देशभक्तिपरक चिंतन प्रबल था। रामचंद्र शुक्ल और हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंधो ने मानवीय मुक्ति चेतना के क्षेत्र में वैचारिक क्रांति उत्पन्न की। साम्राज्यवादी शोषण के विरूद्ध सीधी अर्थ टंकार सुनाई देती है।

बोध प्रश्न–2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग दस पंक्तियों में दीजिए।

1. भारतीय भाषाओं में पत्रकारिता का उदय किस दृष्टि से महत्वपूर्ण घटना है ?

.....

.....

.....

.....

2. नाटय विधा ने जनजागरण में किस प्रकार भूमिका निभाई ?

.....

.....

.....

.....

3. आधुनिक भारतीय कथा साहित्य के नवजागरणवादी स्वरूप का परिचय दीजिए।

.....

.....

.....

.....

4. आधुनिक भारतीय कविता में राष्ट्रीयता की अभिव्यक्ति किस प्रकार हुई ?

.....

.....

.....

.....

7.6 आधुनिक भारतीय साहित्य में व्यक्त राष्ट्रीयता का स्वरूप

7.6.1 राष्ट्रीय – सांस्कृतिक अस्मिता के प्रति नया दृष्टिकोण

भारतीय साहित्य की प्रवृत्तियों में एक प्रबल प्रवृत्ति रही है–राष्ट्रीय–सांस्कृतिक अस्मिता की पहचान, अभिव्यक्ति और नए मनुष्य को रचने का संघर्ष। यह नया मनुष्य स्वाधीनता संग्राम

की शक्ति से निर्मित हुआ है। इस मनुष्य पर गरम दल और नरम दल की विचारधाराओं का प्रभाव भी कम नहीं है। साथ ही यह पुरुष रामकृष्ण और शिव की परंपराओं से निर्मित अपनी सांस्कृतिक अस्मिता को भी पहचान देता है। नवीनचंद्र बनर्जी, रवींद्रनाथ टैगोर, मैथिलीशरण गुप्त, रामधारी सिंह दिनकर, भास्कर रामचंद्र तांबे, अब्दुल अदर आजाद, चिंतामणि महंती, भारतीदासन, पुट्टपा, वल्लतोल और जी. शंकर कुरूप आदि भारतीय कवियों ने रामायण और महाभारत को स्वाधीनता संग्राम के दिनों में कई रूपों में गाया है। पुरानी कथाओं में संदर्भगत अर्थव्यंजना नई है और इस अर्थ व्यंजना के भीतर से भारतमाता का एक संपूर्ण चित्र उभरता है। माखनलाल चतुर्वेदी की कविता जैसे इस भारतीय चित्र को मुकम्मल करती है –

हो मुकुट हिमालय पहनाता
सागर जिसके पद धुलवाता
यह बँधा बेड़ियों से मंदिर
मसजिद, गुरुद्वारा मेरा है।

कवियों ने देश को खंड और प्रदेश के रूप में नहीं देखा। अखंडता, एकता और समग्र के प्रति सम्मान भाव को लेकर ही भारतीय विकसित हुआ है। इस साहित्य में विरूद्धों का सामंजस्य भी इस अर्थ में हुआ कि राम और शिव की परंपराएं दार्शनिक चिंतनधाराओं को आत्मसात करती हुई एकाकार होती गई। अपने अतीत से वर्तमान को प्रेरणा देने की शक्ति ने भारतीय काव्यात्मकता को उदान्त भावभूमि पर स्थित किया।

7.6.2 पराधीनता और दमन के प्रति विद्रोही स्वर

भारतीय स्वाधीनता संग्राम जैसे–जैसे आगे बढ़ता गया वैसे–वैसे भारतीय कविता की शक्ति–चेतना में भी उभार आता गया। भारतीय राजनीति में जो काम स्वाधीनता संग्राम करता है भारतीय कविता में वही काम राष्ट्रीय–सांस्कृतिक नवजागरण की चेतना करती है। नवजागरण की इस चेतना में पराधीनता और दमन के विरुद्ध संघर्ष और विद्रोह का भाव मिलता है। मराठी की कविता हो या हिंदी की कविता, विवशता अथवा निराशा का भाव इसमें नहीं है। चेतना के स्तर पर यह उत्साह और तेजोद्दीप्त ऐतिहासिक परंपराओं के विस्फोट की कविता है। पूरे भारतीय साहित्य में संघर्ष और विद्रोह से यह भाव उदित हुआ है कि जाति, धर्म और प्रदेश से यह देश बड़ा है। यह अखंड भारत हमारा है, यह हमारी पावन मातृभूमि है और इसकी रक्षा हमें हर कीमत पर करनी है। हमारी मातृभमि पर आकर विदेशी शक्तियाँ शासन करें, शोषण करें, दर्शन, भाषा, संस्कृति और इतिहास को भ्रष्ट करें–यह लज्जाजनक स्थिति है। रामनरेश त्रिपाठी का यह कथन महत्वपूर्ण है–

तुम अपने सुख के स्वराज्य के हो न पूर्ण अधिकारी
यह मुनष्यता पर कलंक है, हे प्रिय बंधु तुम्हारी।

पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ देश भावनात्मक स्तर पर संघर्ष का बीज–वपन करता है और प्राणों की आहुति देकर पराधीनता की लौह श्रृंखला को छिन्न–भिन्न कर देने का उदात्त भाव 'एक भारतीय आत्मा' (माखनलाल चतुर्वेदी), निराला, नवीन, दिनकर, पुट्टपा, रवींद्रनाथ टैगोर, भारतीदासन आदि सभी भारतीय रचनाकारों को बहुत भीतर तक मथता रहता है। माखनलाल चतुर्वेदी 'हिमतरंगिणी' में जो बात कहते हैं वही प्रेमचंद अपने उपन्यासों में जयशंकर प्रसाद अपने नाटकों और कहानियों में, निराला अपने संस्मरण और रेखाचित्रों में और महादेवी वर्मा अपने गद्य में गहन अर्थ–व्यंजकता से उठाती है। कहना न

होगा कि जैसे–जैसे भारतीय सर्जनात्मकता में बलिदान और वीरता का स्वर शक्तिशाली होता गया, वैसे–वैसे भारतीय जन–जीवन में भी विद्रोह की एक प्रचंड ज्वाला भड़कती गई। भारतीय जन–मानस जैसे सब कुछ कहने को तैयार हो गया–

तन में आग आंख में मस्ती
ओठों पर मनचाही
कैसे रुकूँ देश सेवा में
मैं हूँ एक सिपाही।

(माखनलाल चतुर्वेदी)

'मैं हूँ एक सिपाही' की भावना भारतीय मानस का वह बिंब है जो हमारी पूरी मानसिकता को मूर्त और प्रत्यक्ष करता है। उर्दू गद्य में देश को चमन के रूप में उभारा गया है और मराठी उपन्यासों तथा गद्य (जैसे चिपलूणकर का गद्य) में सामाजिक क्रांति का अभिन्न स्वर है। प्रेमचंद के उपन्यास 'रंगभूमि' और 'गोदान', रवींद्रनाथ का उपन्यास 'गोरा', सामाजिक–राजनीतिक चिंतन का वह दर्पण है जिसमें पूरा देश अपनी छवि देख सकता है। इसी समय बापू जी ठोमरे 'अरूण', 'संध्या तारिका', 'धर्मवीर' जैसी अमर कविताएँ लिख रहे हैं जिनमें उपनिवेशवाद के प्रति एक गहरी घृणा का भाव है। जयशंकर प्रसाद के राष्ट्रीय स्वाभिमान से भरे गीतों में प्रकृति सौंदर्य के दृश्य आते हैं वैसे ही दृश्य रवींद्रनाथ और ठोमरे की कविताओं में दिखाई देते हैं। यहाँ प्रकृति भक्ति, देशभक्ति का संपूर्ण पर्याय है। कहना न होगा कि पराधीनता और दमन के प्रति एक विद्रोही स्वर भारतीय कविता में प्रवृत्ति के रूप में निरंतर उभरता रहा है।

7.6.3 जनक्रांति का हिंसक–अहिंसक रूप–रंग

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध और बीसवीं शताब्दी के पाँच–छह दशकों का सृजन स्वच्छंदतावादी तत्वों की एक विशेष पहचान बनता है। भारतीय साहित्य की यह स्वच्छंद दृष्टि बालमीकि, व्यास और कालिदास से प्रेरणा ग्रहण करती है। ऐसा प्रतीत होता है कि हमारी राष्ट्रीय–सांस्कृतिक सर्जनात्मकता बाल्मीकि और कालिदास की राष्ट्रीय चेतना का नवीन रूपांतरण कर रही है। फ्रांसीसी राजक्रांति और बोल्शेविक क्रांति का प्रभाव दिखाई देता है, किंतु यह प्रभाव भीतर–बाहर जज्ब होकर नहीं बिंधा है, बल्कि चिंतन पर ऊपरी पपड़ी की तरह जमा है जो प्रभाव भीतर से उमड़ रहा है वह बाल्मीकि और कालिदास राष्ट्रीय क्षमता का ही एक रूप है। बहुजातीय देश एक राष्ट्र की हैसियत से इतिहास में उभरता है और इस ढंग का उभार विश्व में और कहीं नहीं दिखाई देता। यहाँ राष्ट्रीयता एक जाति द्वारा दूसरी जातियों पर राजनीतिक प्रमुख कायम करके स्थापित नहीं हुई वह मुख्यतः संस्कृति और इतिहास की देन है। इस दृष्टि से डॉ. रामविलास शर्मा का यह कथन स्मरणीय है –

> 'इस संस्कृति के निर्माण में इस देश के कवियों का सर्वोच्च स्थान है। ..... इस देश की संस्कृति से रामायण और महाभारत को अलग कर दें तो भारतीय साहित्य की आंतरिक एकता टूट जाएगी। किसी भी बहुजातीय राष्ट्र के सामाजिक विकास में कवियों की ऐसी निर्णायक भूमिका नहीं रही जैसी इस देश में व्यास और बाल्मीकि की है। ..... इसीलिए किसी भी देश के लिए साहित्य की परंपरा का मूल्यांकन उतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना इस देश के लिए है।' (परंपरा का मूल्यांकन, पृ. 15)।

भारतीय जाति के सांस्कृतिक इतिहास की रूपरेखा भारतीयता के एक निश्चित ढाँचे में विकसित हुई है। रवींद्रनाथ टैगोर ने एक मर्म की बात पकड़ी है कि बाल्मीकि उस काव्य

परंपरा को भारतीय साहित्य में जन्म दे रहे थे जो बहुत गहराई से मानवतावादी है। देवत्व को अब बाहर खोजने की नहीं, भीतर खोजने की प्रक्रिया शुरू होती है। आधुनिक सृजन मनुष्य के भीतर जगे हुए देवता को सामाजिक जागरण के लिए उकसाता है। सामाजिक जागरण ने प्रश्नों और चुनौतियों को नया रूप दिया। महाराष्ट्र में गरम दल के कवि नागेश और पांडुरंग रेंदालकर ने क्रांतिकारी गीत लिखे। हिंदी में श्याम नारायण पांडेय, सोहनलाल द्विवेदी, गया प्रसाद सनेही 'त्रिशूल', बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के गीतों का स्वर मराठी के गीतों से बहुत भिन्न नहीं है। उर्दू में मजाज जोश, फैज, मीराजी, बंगला में मोहित मजूमदार, जीवनानंद दास, काजी नजरूल इस्लाम आदि का क्रांति स्वर उल्लेखनीय है। नजरूल क्रांति चेतना के गायक के रूप में उभरकर देश–भर में गूँज उठे और उनके सृजन का अनुवाद देश की विभिन्न भाषाओं में फटाफट हुआ। उदाहरण के लिए सिंधी में प्रो.डी.के. मशारामाणी ने नजरूल के सृजन का बड़ा रोचक अनुवाद 'बागी' शीर्षक से प्रस्तुत किया। यहाँ यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि रवींद्रनाथ टैगोर और नजरुल इस्लाम ने भारतीय सृजन चेतना को किसी न किसी रूप में अवश्य प्रभावित किया। ऐसे कम ही भारतीय रचनाकार नहीं होंगे जिस पर इन दो कवियों का स्वर रंग न हो।

भारतीय राष्ट्रीय सांस्कृतिक सृजन का अहिंसक रूप अनेक छवियों में निखर कर सामने आया। प्राचीन वीर और भावना और नवीन वीर भावना–प्रधान सृजन में एक बड़ा अंतर यह है कि प्राचीन सृजन में शत्रु के संहार का भाव था किंतु इस नवीन सृजन में शत्रु संहार का भाव नहीं है। आक्रमण का स्थान यहाँ आत्म–बलिदान ने ले लिया है। गांधी विचार दर्शन में डूबे हुए कवि माखनलाल चतुर्वेदी ने लिखा है –

रक्त है ? या नसों में क्षुद्र पानी ?
जाँच कर तू शीश दे देकर जवानी।

(हिमकिरीटिनी)

देश भक्तों ने प्राणों के उत्सर्ग को मातृपूजा का भाव स्वीकार किया। सियाराम शरण गुप्त का 'उन्मुक्त', रामनरेश त्रिपाठी का 'स्वप्न', उमाशंकर जोशी का 'गंगोत्री, कृष्णलाल श्रीधरानी का 'कोडिया', प्रीतम सिंह का 'कत्त ककूजा', शुद्धानंद भारती का 'भारत शक्ति', सुब्बाराव का 'ललिता' आदि काव्य संग्रह गांधी विचार दर्शन की सर्जनात्मक अभिव्यक्ति है। भारतीय अहिंसक वीरता का रूप गांधी में साकार हुआ है। विश्व ने इतने लघु शरीर में इतना प्राणवान व्यक्तित्त्व पहली बार देखा था। इस अद्‌भुत संत योद्धा ने भारतीय इतिहास की गति बदल दी और हमारी चेतना को एक ऐसी कवरट दी कि हमने अपनी परंपरा को पहचाना। महात्मा फुले, नरसी मेहता, कबीर, जायसी, एकनाथ, प्राणनाथ की पहचान भारतीय चिंतन में नए सिरे से उभरने लगी। भारतीय वैष्णव चिंतन परंपरा का मंत्र जैसे गांधी में नया रूप लेकर आया।

वैष्णव जन तो तेने कहिए पीर पराई जानें रे
पर दुखे उपकार करें ते मन अभिमान न मानें रे।

गांधी अहिंसक जननायक होकर उभरे और बौद्ध–जैन तथा वैष्णव चिंतन परंपराओं ने उनमें अपना अर्थ पाया। भारतीय साहित्य के इस चिंतनात्मक स्वर में रौद्र नहीं, करूण भाव रहा है। फिर निराशा के स्वर को ठेलकर गांधी ने मुक्ति संग्राम में आस्था का जीवन दीप प्रज्वलित किया। इसीलिए पूरा भारतीय साहित्य आस्थावादी जीवन मूल्यों से भर गया।

7.6.4 प्रकृति–प्रेम के माध्यम से राष्ट्रीयता की अभिव्यक्ति

भारतीय रचनाकार की राष्ट्रीयता में सामाजिक स्वाधीनता और वैयक्तिक विकास की भावना यदि एक ओर रूढ़िवाद से विद्रोह के रूप में सामने आयी तो दूसरी ओर प्रकृति प्रेम के रूप में। यह समझना बहुत जरूरी है कि प्रकृति प्रेम से राष्ट्रीयता और सामाजिक स्वाधीनता का सीधा संबंध हैं। प्रायः हम स्वच्छंद प्रवृत्ति के कवि और स्वच्छंतावादी कवियों की प्रेरणा प्रकृति चिंतन में पाते हैं। यह महत्वपूर्ण तथ्य है कि आधुनिक भारत में राष्ट्रीयता और देशभक्ति की भावना को प्रकृति प्रेम ने पुष्ट और प्रेरित किया। राष्ट्रीय जागरण युग की अनेक रचनाओं (उपन्यास, कहानी, कविता, नाटक आदि) में यह बात साफ दिखाई देती है कि राष्ट्रीयता की भावना प्रकृति प्रेम से ही उत्पन्न हुई और प्रकृति प्रेम से ही प्रेरणा पाकर भावुक हृदय देशोद्धार के लिए प्रवृत्त हुए। देश प्रेम का आरंभ प्रकृति प्रेम से किस तरह होता है, इस बात को समझने के लिए आचार्य रामचंद्र शुक्ल के इस कथन पर हमारा ध्यान जाना चाहिए –

'यदि किसी को अपने देश से प्रेम है तो उसे अपने देश के मनुष्य, पशु, पक्षी, लता, गुल्म, पेड़, पत्ते, कण, पर्वत, नदी, निर्झर सबसे प्रेम होगा। सबको वह चाह भरी दृष्टि से देखेगा। सबकी सुधि करके विदेश में भी आंसू बहाएगा। जो यह भी नहीं जानते कि कोयल किस चिड़िया का नाम है, यदि वे दस बने–ठने मित्रों के बीच प्रत्येक भारतवासी की औसत आमदनी बताकर देश प्रेम का दावा करें तो उनसे पूछना चाहिए कि भाइयों बिना परिचय का यह प्रेम कैसा ? (चिंतामणि, भाग 1)

आधुनिक राष्ट्रीयता ने अपनी पहचान प्रकृति प्रेम के रूप में बनाई और आधुनिक युवक प्रकृति में ही समा गया। आधुनिक युवक घुटते हुए समाज को छोड़कर उन्मुक्त प्रकृति की ओर गया। क्यों गया, इसका उत्तर रामनरेश त्रिपाठी का 'पथिक' अपनी प्रिया को देता है –

जहाँ श्रमी से क्रयी–विक्रयी वेश्या सुखी सती से
निर्जन वन है परम सुखद रूस न्यायरहित जगती से।

जहाँ प्रकृति का राज्य है, वहाँ न केवल अबाध स्वच्छंदता है बल्कि अक्षय सौंदर्य भी है।

'जाना नहीं चाहता हूँ मैं क्षण–भर को भी जग में
चलता रहूं यही इच्छा है सदा प्रेम के मग में
यह इच्छा है नदी और नालों का वेश धरूँगा
गाता हुआ गीत मस्ती के पर्वत से उतरूँगा।

'पथिक'

नए युवक को पुरानी सामंतवादी व्यवस्था के घुटते हुए वातावरण की अपेक्षा मुक्त प्रकृति क्षेत्र मिला। पशु–पक्षियों की वह पहचान मिली जिसमें जीवन के जागरण का स्वर है –

प्रथम रश्मि का आना रंगणि तूने कैसे पहचाना
कूक उठी सहसा तरू वासिनि गा तू स्वागत का गाना।

'सुमित्रानंदन पंत'

सामाजिक और वैयक्तिक स्वाधीनता की तलाश में मनुष्य प्रकृति के प्रांगण में आया। पुरानी समाज व्यवस्था में खोई हुई वैयक्तिकता उसके व्यक्तित्त्व को घेरे थी। लेकिन नई समाज चेतना प्रकृति को नए संदर्भो से राष्ट्रीयता की अर्थध्वनि देती थी। जयशंकर प्रसाद ने लिखा–

नव सुरधुन से पंख परवारे शीतल मलय समीर सहारे
उड़ते खग जिस ओर मुँह किए समझ नीड़ निज प्यारा
अरूण यह मधुमय देश हमारा।

'चंद्रगुप्त' नाटक से

प्रकृति प्रेम के माध्यम से नवीन सामूहिकता और सामाजिकता को प्राप्त करने के लिए रचनाकारों ने नवीन मानसिक तैयारी के साथ प्रकृति परिवेश निर्मित किया और इसी परिवेश निर्मित के भीतर उसे जन्मभूमि के प्रति प्रेम और दायित्व का अनुभव हुआ। सच्ची स्वाधीनता से ही स्वस्थ राष्ट्रीयता का विकास संभव है। रीतिवादी, समाजवादी या व्यक्तित्व को कुचलने वाली सामाजिकता से राष्ट्रीय स्वाधीनता का विकास नहीं हो सकता। फलतः भारतीय रचनाकारों ने व्यक्तिगत स्वाधीनता को महत्व देते हुए राष्ट्रीय स्वाधीनता की ओर कदम उठाया।

भारतीय साहित्य के आधुनिक स्वच्छंदतावाद ने प्रकृति को इतना महत्व दिया कि सृजन में प्रकृति को स्वतंत्र सत्ता के रूप में ही प्रतिष्ठित किया गया। आधुनिक विज्ञान की चेतना भी प्रकृति के सौदर्य दर्शन का उद्‌घाटन करती है विज्ञान ने विवेक से रहस्योद्‌घाटन किए। बाल्मीकि और कालिदास का प्रकृति काव्य कवियों की प्रेरणा बना। इन कवियों को लगा कि जीवन का प्रकाश प्रकृति से ही फूट रहा है। रवींद्रनाथ की 'निर्झरेर स्वप्नभंग' इसी आलोक के प्रस्फुटन का अहसास कराती है –

'आज ए प्रभाते रविरकर
केमने पशिलो प्राणेरपर
केमने पशिलो गुहार आंधारे प्रभात–परिवरगान
ना जाने कैनो रे ऐत दिन परे जागणिया उठिलो प्रान'

प्रभात की पहली किरण जैसे रवींद्र को चौंकाती है। वैसे ही हिंदी कवि पंत को भी चौंकाती है। 'प्रथम रश्मि' नामक कविता में वे लिखते है –

'खुले पलक फैली सुवर्ण छबि
जगी सुरभि डोले मधुबाल
स्पंदन कंपन औ नवजीवन
सीखा जग ने अपना नाम'

पंत ने भारतीय प्रेरणा शक्ति गंगा को नवीन सौंदर्यबोध से नवजागरण के रंग में उजला करते हुए प्रस्तुत किया –

तापस बाला गंगा निर्मल
मृदु जल से दीपित मृदु करतल
गोरे अंगों पर सिहर–सिहर
लहराता तार तरल सुंदर
चंचल अंचल सा नीलांबर'

भारतीय कवि की यह सर्जनात्मक कल्पना धरती और आकाश को एक कर रही है। यह अभूतपूर्व खुलापन प्रकृति के नए भावबोध से उत्पन्न हुआ है। प्रकृति संपूर्ण भारतमाता की पार्वती छवि का पर्याय बन गई है। निराला ने 'राम की शक्ति पूजा' में लिखा –

'पार्वती कल्पना है इसकी मकरंद बिंदु
गरजता चरण प्रांत पर सिंह वह नहीं सिंधु
दस दिस समस्त हैं हस्त और देखो ऊपर
अंबर में हुए दिगंबर अर्जित शशि–शेखर'

भारतीय कवियों ने भारत माता के संपूर्ण सौंदर्य को प्रकृति में पाया और इस प्रकृति चेतना ने उसकी दृष्टि ही बदल दी। यही बदली हुई प्रकृति दृष्टि 'सृजलाम सुफलाम् मलयज शीतलाम मातरम/बंदे मातरम बंदे मातरम' गीत का प्राण भाव बनी। बंगला के स्वच्छंतावादी और हिंदी के 'छायावादी' रचनाकारों ने प्रकृति की विराटता को राष्ट्रीयता का गरिमामय स्वरूप प्रदान किया। महादेवी वर्मा ने लिखा–

तारकमय नव वेणी बंधन
शीश फूल शशि का कर नूतन
रश्मिवलय सितधन अवगुंठन
मुक्ताहल अभिराम बिछा दे
चितवन से अपनी
पुलकती आ वसंत रजनी

भारतीय कवियों ने प्रकृति पर चेतना का आरोप करके उसे मातृशक्ति मातृभूमि के रूप में देखा और उसमें एक ऐसी दृष्टि पाई जो जीवन को बृहत्तर बनाती है। कोकिल, चातक, मोर, पपीहा, कृष्णा, कावेरी, गोदावरी, गंगा, नर्मदा, वर्षा, टेसू, हिमालय के शत–शत बिंबों से भारतीय सर्जना पट गई। रामनरेश त्रिपाठी ने लिखा–

मनमोहिनी प्रकृति की जो गोद में बसा है
जिसका मुकुट हिमालय वह देश कौन सा है

गंगा, हिमालय जैसे प्राकृतिक प्रतीक पूरी भारतीय अस्मिता को सामने लाने लगे। इनके माध्यम से हमारी सांस्कृतिक संवेदना ने एक नवीन अंतर्दृष्टि पाई और इस नवीन अंतदृष्टि ने राष्ट्रीयता के छवि चित्र को सुलभ और निखरे रूप में प्रस्तुत किया जैसे –

हिमालय के आंगन में जिसे प्रथम किरणों का दे उपहार
उषा ने हँस अभिनंदन किया और पहनाया हीरक हार।

x x x x x x

जिएं सदा उसी के लिए यही अभिमान रहे यह हर्ष
निछावर कर दें हम सर्वस्व, हमारा प्यारा भारतवर्ष ।

'जयशंकर प्रसाद'

मेरे नागपति मेरे विशाल
मेरी जननी के हिमकिरीट
मेरे भारत के भव्य भाल।
तू पूछ अवध से राम कहाँ
वृंदा बोलो, घनश्याम कहाँ

रे मगध कहाँ मेरे अशोक
वह चंद्रगुप्त बलिधाम कहाँ

'दिनकर'

भारतीय कवियों ने प्रकृति के माध्यम से भारतीय इतिहास और संस्कृति की पहचान का सिलसिला शुरू किया। इतिहास की पहचान किसी भी जाति को आत्मालोचन और आत्मविश्वास की शक्ति देती है और यह शक्ति भारत माता के चित्र को जगाती है। निराला ने लिखा –

भारति जय विजय करे
कनक शस्य कमल धरे
लंकापदतल शतदल
गर्जित उर्मि सागर जल
धोता तद चरण धवल
स्तव कर बहु अर्थ भरे।

निराला का क्रांतिकारी बादल 'घन गरजे, जन गरजे' का स्वर लेकर केदारनाथ अग्रवाल की कविता में फूट पड़ा। भारत की कविता स्वाधीनता का युद्ध कर रही है और उसके भीतर एक व्यापक जन क्रांति की चेतना उमड़ रही है–

'आज मंडलाकार मेघ सा उमड़ घुमड़ कर
शासन को थर्राने वाला
कोटि–कोटि कंठों का जनमत
भारत की आजादी के हित
ओजपूर्ण गर्जन करता है।'

'गुलमेंहदी', केदारनाथ अग्रवाल

हिंसा–अहिंसा का सवाल एक तरफ छोड़कर सामंत विरोधी संग्राम में भारतीय किसान कैसे आगे बढ़ा। इस प्रकार के भाव की अभिव्यक्ति 'युग की गंगा' नामक संकलन की कविताओं में मिलती है। भारतीय साहित्य की राष्ट्रीयता की प्रकृति दृष्टि को समझने के लिए यह कृति एक बहुमूल्य दस्तावेज है। भारतीय कवि ने प्रकृति को सामाजिक–राजनीतिक उद्धार की संभावना की शक्ति के रूप में भी देखा है। भारतीय जनता के आत्म–विश्वास से भरे हुए शत–शत बिंब राष्ट्रीय–सांस्कृतिक काव्य के बिंबों में दिखाई देते हैं –

'एक बीते के बराबर
यह हरा ठिंगना चना
बाँधे मुरेठा शीश पर
छोटे गुलाबी फूल का
सज कर खड़ा है।'

'फूल नहीं रंग बोलते हैं' केदारनाथ अग्रवाल

कहा जा सकता है पृथ्वीपुत्र और वनस्पति जगत की संवेदना को एकाकार करते हुए कवियों ने प्राकृतिक परिवेश का चित्रण किया है और इस परिवेश के भीतर कालिदास–वाल्मीकि और रवींद्रनाथ टैगोर एक–साथ बोलते सुनाई देते हैं।

7.6.5 भविष्य के प्रति आस्था और उल्लास की अभिव्यक्ति

दादाभाई नौरोजी तिलक, लाला लाजपत राय, गोखले, गांधी आदि के नेतृत्व में देश ने उत्साह, आस्था और आल्हाद को रचनात्मक शक्ति के रूप में अनुभव किया। भारतीय राष्ट्रीयता ने अतीत गौरव के गान को अपने वर्तमान में नया भविष्य भरने के लिए उमंग से गाया। भारतीय साहित्य ने भारतभूमि की वंदना अनेक छवियों में की और इन छवियों ने भारतीय जन–मानस पर जमे विषाद को धो डाला। भारतीय राष्ट्रीयता का गांधी युग आलोक से भरा हुआ है। विजय देव नारायण साही ने लिखा है –

> 'सत्याग्रह युग विराट नाटकीयता का युग है। उस युग के बारे में पढ़कर ही हम रोमांचित होने लगते हैं। फिर उस समय जिंदा होना और उसकी लय को महसूस करना स्वर्ग में रहने के बराबर ही रहा होगा।'
>
> **(छठवाँ दशक, पृ. 268)**

राष्ट्रीयता की हवाओं ने परिवेश में ही 'झंझा झकोर गर्जन' नहीं की है बल्कि इतिहास की उत्ताल तरंगों के ऊपर भी एक ऐसी गति पैदा की जिससे हमारे इतिहास ने एक जबरदस्त अंगड़ाई ली। राष्ट्रीयता से ऐसा अनुभव हुआ जैसे अग्नि बाणों से आकाश भर गया है। जयशंकर प्रसाद के नाटकों की राष्ट्रीयता एक प्रकार से उस भारतीयता का प्रतीक है जिसमें पूरा स्वाधीनता आंदोलन इतिहास रथ को आगे खींचता हुआ दिखाई देता है। इसमें एक ही ध्वनि निकल रही है –

> 'स्वयंप्रभा समुज्वला स्वतंत्रता पुकारती'
>
> **'चंद्रगुप्त'**

> या फिर 'स्कंदगुप्त' नाटक की यह प्राण ध्वनि
> 'निछावर कर दें हम सर्वस्व हमारा प्यारा भारतवर्ष'

सर्वस्व त्याग के साथ हमारा प्यारा भारतवर्ष का बीज भाव भारतीय राष्ट्रीयता की मूलभूमि है। इसलिए राष्ट्रीयता में नस्लवाद, सम्प्रदायवाद का कोई स्वर नहीं मिलता। दो–दो विश्व युद्धों के बीच से यह कविता गुजर रही है लेकिन राष्ट्रीयता व्यापक अर्थ में देशभक्ति को ध्वनित करती है क्योंकि गांधी के चिंतन में ही मानव–घृणा का भाव नहीं है। भारतीय सृजन ने नैतिक मानवीय मूल्य और सांस्कृतिक बोध के स्तर पर मनुष्य को यह भरोसा दिलाया कि आगे का मार्ग अंधकारपूर्ण नहीं है। उमाशंकर जोशी (गुजराती), विनायक कृष्ण गोकाक (कन्नड़), चिपलूणकर (मराठी), जीवनानंददास (बंगला), माखनलाल चतुर्वेदी (हिंदी), रामधारी सिंह दिनकर (हिंदी) जैसे रचनाकारों के सृजन में निराशा का स्पर्श तक नहीं है। कारण, राष्ट्रीय आंदोलन की मुख्य भावधारा एक शक्ति तरंग के रूप में प्रकट होती है जिसमें हर कीमत पर साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद को इस देश से बाहर कर देने का अरमान है। कांग्रेस आंदोलन की सभी सहयोगी संस्थाएं और प्रगतिशील आंदोलन की उभरती हुई शक्तियाँ, दोनों मिलकर एक ऐसी चट्टानी आस्था को जन्म देती है कि उसमें निराशा को स्थान नहीं मिल पाता। प्रेमचंद का उपन्यास 'रंगभूमि' इसी मानसिकता की भारतीय अभिव्यक्ति है। परिवर्तन की गति इतनी तेज है कि अंतः सलिला की सतह पर तूफान पछाड़ें खाता है लेकिन गहराई में भारतीय मानस नए आजादी के स्वर्णिम भविष्य की तैयारी करता है। गांधी, सुभाष और जयप्रकाश नारायण का नेतृत्व भारतीय जनता के लिए परिवर्तनकारी ही नहीं क्रांतिकारी भी था। भारतीय सृजन मूलतः इसी मानसिकता का भावानुवाद कहा जा सकता है। इस युग के भी रचनाकारों–चाहे वे काजी नजरूल इस्लाम हो सुब्रह्मण्यम भारती सभी के–सृजन में शक्ति के उठे हुए लहू की धड़कन सुनाई देती है। एक ऐसे मनुष्य का

बिंब यह सृजन निर्मित करता है जिसमें हर मुसीबत को मुस्कराहट से झेल लेने की तमन्ना है। नतीजा यह हुआ है कि इस भारतीय राष्ट्रीयता में मात्र आदर्शवादी स्वर ही नहीं है लघु के साथ महत विचारों की सशक्त अभिव्यक्ति मिलती है। सत्याग्रह युग की चेतना भारतीय भाषाओं के साहित्य में एक ऐतिहासिक अनुभव के साथ हिंदुस्तान के उस व्यक्तित्त्व को गढ़ती है जिसका पूरा मिजाज आगे–बढ़ो, आगे–बढ़ो की आंतरिक ध्वनि लिए हुए है। सत्याग्रह युग की इस चेतना में जो स्वच्छंदतावादी स्वर सुनाई देता है उसके पीछे हमारे इतिहास की वही चेतना काम करती है जिसमें मुक्ति भावना की आंतरिक आकांक्षा है। इसलिए राष्ट्रीयता के भीतर फूटता स्वच्छंदतावाद पश्चिमी ढंग का नहीं है, उसकी मूल मनोभूमि 'रामायण' और 'महाभारत' की परंपरा की चेतना से उठान पाती है।

7.6.6 देशभक्ति और जनजागरण का प्रकाश

भारत में राष्ट्रीयता का विकास एक सुदीर्घ ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम है। इस प्रक्रिया में आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक कारण मौजूद है और यह प्रक्रिया अभी तक समाप्त नहीं हुई है। विदेशी इतिहासकार भारतीय राष्ट्रीयता को और उससे जुड़ी राष्ट्रभक्ति की भावना को समझने में असमर्थ रहे हैं। अंग्रेजी में 'नेशन' के समानांतर एक शब्द और है–'नेशनेलिटी'। इन दोनो में स्पष्ट भेद करना कठिन है। डॉ. रामविलास शर्मा ने लिखा है 'हिंदी में कुछ लोग 'नेशन' के पर्यायवाची रूप में 'राष्ट्र के अलावा 'राष्ट्रीयता' का व्यवहार करते हैं जहाँ अंग्रेजी में बहुवचन–'नेशनेलिटीज' होगा वहाँ हिंदी में राष्ट्रीयताएं लिखेंगे। इस दृष्टि से देखने पर भारत में अनेक राष्ट्रीयताएं दिख सकती है। लेकिन अगर हम भारतीय दृष्टि से देखते हैं तो राष्ट्र एक समग्र देश प्रेम की अवधारणा है और साहित्य में 'नेशन' शब्द, जिस अर्थ में प्रयुक्त होता है उसके लिए उचित शब्द होगा 'जाति'। भूलना नहीं चाहिए कि राष्ट्र शब्द से भूमि का भी बोध होता है। जबकि नेशन शब्द से केवल किसी भूमि खंड के निवासियों का बोध होता है। 'राष्ट्र' और 'जाति' को अलग–अलग रखने से हम उस उलझन से बच सकते हैं जो 'नेशन' शब्द के व्यवहार से उत्पन्न होती है। मुख्य बात यह है कि किसी देश में रहने वाली जातियाँ आपस में एक–दूसरे से किस तरह का व्यवहार करती हैं। एक साथ रहने के कारण उनकी कोई सामान्य ऐतिहासिक परंपराएं निर्मित हुई हैं या नहीं। भारत की राष्ट्रीयता की भावना के विवेचन के लिए यूरोप के किसी भी देश का उदाहरण सामने रखना उचित नहीं है। अगर रखना ही है तो स्विटजरलैंड का उदाहरण रखना चाहिए। भारत में भरत, कुरू, पांचाल, आदि अनेक गण समाज थे। बौद्धकाल में जिन्हें महा जनपद कहा जाता था, वे लघु जातियों के प्रदेश थे। आज भी ब्रज, अवध, बुंदेलखंड आदि इन्हीं लघु जातियों वाले प्रदेशों के अवशेष हैं। इन्हीं लघु जातियों से आधुनिक हिंदी जाति का निर्माण हुआ है। आज के भारत में बंगला, मराठी, तमिल, कन्नड़ आदि भाषाएं बोलने वाली अनेक जातियाँ रहती हैं। वैदिक काल में महाभारत काल में और बाद में भी 'राष्ट्र' शब्द का प्रयोग यहाँ होता आया है और इस 'राष्ट्र' शब्द का अर्थ है देश या वह भूमि जिस पर कोई मानव समुदाय रहता आया है। ऐसा भी हुआ है कि जनपदों, महाजनपदों के समूह को राष्ट्र की संज्ञा दी गई है। संस्कृत में 'वर्ष' शब्द इसी ढंग का है और उसी से 'भारतवर्ष' शब्द बना है। भारत एक राष्ट्र है। छोटे–छोटे राज्य आपस में युद्ध और प्रेम के संबंध में बंधे हैं। भारतीय राज्यों के सांस्कृतिक संबंधों की परिधि बहुत दृढ़ और व्यापक है।

अंग्रेजों से मुक्ति पाने के लिए भारत ने जो स्वाधीनता संघर्ष शुरू किया वह एक राष्ट्र का सम्मिलित संघर्ष है जिसमें राष्ट्रीय एकता की पूरी दृष्टि आधुनिक काल में दिखाई देती है। यह अंग्रेजों की कृपा नहीं है कि भारत में राष्ट्रीय एकता से एक व्यापक देशभक्ति की भावना

जन्म लेती है। बल्कि एक सुविचारित सत्य है कि यह हमारी सांस्कृतिक–ऐतिहासिक परंपराओं की आंतरिक पुकार का प्रतिफलन है। इसमें प्राचीन मध्ययुगीन से अलग नहीं है और न मध्ययुगीन आधुनिक से। इसीलिए हमारी देशभक्ति भावना में अतीत गौरवगान को बहुत बड़ा स्थान मिला है। देश के प्रति भक्ति या रागात्मक संबंध का अर्थ है– देश के वन–उपवन, पहाड़–पठार, खेत, नदी, देशवासी–सभी के साथ एक गहरा अटूट आंतरिक लगाव। जब हम अपनी सत्ता को देश से पृथक करते ही नहीं, तब देश–प्रेम या देशभक्ति का जन्म होता है। जैसे भक्त सब कुछ प्रभु को अर्पित कर देता है वैसे ही देश के प्रति प्रेम या भक्ति रखने वाला हृदय देश के चरणों में सब कुछ अर्पित कर देता है। यही अर्पण भावना शीशदान कराती है, यही भावना देश को पराधीनता और शोषण से मुक्ति दिलाना चाहती है, देशभक्ति का यही भाव देश को मुक्त रखने की संकल्पबद्धता पैदा करता है–

तन में आग आंख में मस्ती ओठों पर मनचाही
कैसे रुकूँ देश सेवा में मैं हूँ एक सिपाही।

'माखनलाल चतुर्वेदी'

भारतीय साहित्य में जो देशभक्ति का भाव पैदा हुआ, वह रामायण, महाभारत के उस भाव का विस्तार है जिसमें संजय भारतवर्ष का वर्णन करता है। इस देश में गंगा, सिंधु, सरस्वती, गोदावरी, नर्मदा, वितस्ता, गोमती, कावेरी आदि नदियाँ प्रवाहित हैं इसमें कुरू, पांचाल, कोसल, कुलिंद, पुलिंद, आंध्र आदि अनेक जनपद हैं और इसमें कहा गया है कि मनुष्य अपने गुण और शक्ति के अनुसार इस पृथ्वी की सेवा करे, रक्षा करे।

यह धरती कामधेनु के समान फल दे सकती है, इसलिए इसे प्राणों की तरह प्रिय समझें। यह धरती सेवा के लिए है, भोगने के लिए नहीं इसलिए धरती की रक्षा धर्म है और यह धर्म सभी मनुष्यों से जुड़ा है चाहे वह किसी भी प्रदेश और किसी भी स्थिति का हो।

चिंतन के इसी सांचे से संस्कृत साहित्य की राष्ट्रीयता या देशभक्ति भावना निर्मित हुई है और इसी भावना का विस्तार भारतीय भाषाओं के साहित्य ने किया है। राजनीतिक रूप से यह देश चाहे कभी एक न रहा हो, किंतु इस देश की सांस्कृतिक साहित्यिक एकता अखंड रही है। कवियों ने इस देश की सांस्कृतिक एकता को रखने में जितनी बड़ी सफलता प्राप्त की है वैसी दुनिया के किसी अन्य देश में दुर्लभ है। भारतीय संस्कृति का एक ही स्वर है जिसे कवि अनेक रूपों में गाता है–भारत राष्ट्र की एकता। इस बात को भूल जाना या पश्चिमी दृष्टि से भारत को देखना, भारत की राष्ट्रीय एकता और कवि दृष्टि को अस्वीकार करना होगा। सभी नदियों का भारत हम जल पीते हैं –

आसा पिबंति सलिलं वसंति सहिताः सदा
यह कवि उक्ति है और यही राष्ट्रीय एकता का आधार है।

पराधीन भारत ने साम्राज्यवादी शक्तियों से टक्कर लेने के लिए जिस देशभक्ति भावना को विकसित किया है उस चिंतन का आधार है संपूर्ण भारतवर्ष। फलतः भारतीय कवियों ने ब्रिटिश साम्राज्यवादी शोषण और अन्याय के खिलाफ एक स्वर से आवाज उठाई। आरंभ में तो यह स्वर मानवतावाद के आधार को लिए था जिसका एक रूप करूणा के अर्थ संदर्भ से बंधा था किंतु आगे चलकर यह उस समाजवादी मानवतावाद की ओर मुड़ गया जिसका रूप रवींद्रनाथ ठाकुर, काजी नजरूल इस्लाम, मैथिलीशरण गुप्त आदि के सृजन में दिखाई देता है। भारतीय सृजन का देशभक्तिपरक रागात्मक रूप तब अधिक शक्तिशाली दिखायी देता है जब जयशंकर प्रसाद, दिनकर, त्रिशूल, सोहनलाल द्विवेदी, नवीन, फिराक गोरखपुरी,

सागर निजामी, फ़ैज अहमद फैज़ आदि नए भावों की कविता लिखते हैं। निजामी ने लिखा हम जनजागरण लाकर दम लेंगे–

सोने वालों को इक दिन जगा देंगे हम
रस्मों राहे गुलामी मिटा देंगे हम
अथ वतन अथ वतन अथ वतन
सर से बाँधे हुए हैं तिरंगा कफन
जिस तरफ से पुकारेगा हिंदोस्ताँ
उस तरफ से वफा की सदा देंगे हम

गया प्रसाद शुक्ल सनेही 'त्रिशूल' ने लिखा–

अब लौ यही लगन लगी थी हर जवान को
आजाद करके छोड़ेंगे हिंदोस्तान को
जिस पर कि लोकमान्य ने कुरबान जान की
महिमा महान बापू ने जिसकी बखान की
जिसके लिए सुभाष ने सीधी कृपाण की
अपना के जिसको दूनी जवाहर ने शान की
क्या है गजब कि कब्रों से मुर्दे निकल पड़े
जय हिंद बोल बोल के दिल्ली को चल पड़े।'

देश भक्ति का एक दूसरा रूप भी है जिसमें रचनाकर देश को एक जीवित प्रतीक या सत्ता मानकर नमन करते हैं। देश का पूरा इतिहास वीरों की गाथाएं गा उठता है –

चित्तौड़, ब्रज, अयोध्या, गंगा, हिमालय प्रेरणा स्रोत बन जाते हैं। यहाँ इतिहास अतीत से वर्तमान का संवाद करता है। जन कवि काजी नजरूल इस्लाम ने लिखा कि दुर्गम पर्वत, मैदान, मरूस्थल और सागर फैले हैं, रात के अंधेरे में इन्हें फिर से पार करना होगा, यात्रियों सावधान –

'दुर्गम गिरि कांतार
मरू दुस्तान पारावार
लाँघिवे हवि रात्रि निशीथे
यात्रिरा हुंशियार'

कभी–कभी इस तरह भी लिखा

'चल चल चल
ऊर्ध्व गगने बाजे मादल
निम्ने उत्तला धरण तल
अरुण पांतेर तरुण दल
चल रे चल रे चल

छात्रों के लिए एक प्रयाण गीत लिखा

आमारा शक्ति आमरा बल
आमारा छात्र दल

(हमारी शक्ति हमारा बल हमारा छात्र दल है।)

नजरूल की आत्मा के ये गीत देशभक्ति का ऐसा साक्षात्कार करा देते हैं जिन्हें भारतीय भाषाओं के सभी रचनाकारों ने अनेक रूपों में गाया है। इन भाषाओं के अनेक 'प्रयाण गीतों' में स्वाधीनता आंदोलन के जागरण का बिम्ब मौजूद है। देशभक्तिपरक यह स्वर हिंदू–मुस्लिम सांप्रदायिकता के उभार पर व्यंग्य करता है। मोहिम मजूमदार, उमाशंकर जोशी, जयशंकर प्रसाद आदि ने अनेक विधाओं में ऐसा सृजन किया है जिसमें देशभक्ति की संपूर्ण शक्ति व्यक्त हुई है।

जनजागरण का शंखनाद अनेक अर्थों में देशभक्ति से जुड़ा है। रवींद्रनाथ, केशवसुत, भारतेंदु, दिनकर, हाली, निजामी आदि के पूरे सृजन में भौगोलिक विशालता के साथ–साथ लोक हृदय में अपने हृदय को मिला देने का भाव है। पराधीन भारत में सामाजिक–राजनीतिक आंदोलनों से जो जनजागरण पैदा हुआ था उसका एक विराट चित्र निराला ने अंकित किया है– 'भारति जय विजय करे' कविता में। इस जनजागरण को अशोक, महाराणा प्रताप, लक्ष्मी बाई और दुर्गावती की ऐतिहासिक चेतना से भी जोड़कर व्यक्त किया गया एवं तिलक और गांधी की जनवंदना के रूप में भी। सभी भारतीय रचनाकारों ने संस्कृति का ऐसा चित्र खींचा है जिसमें वैष्णव, जैन, बौद्ध, मुस्लिम, ईसाई, सिक्ख–सभी एक साथ क्रांति के लिए आगे बढ़ रहे हैं। रवींद्रनाथ जिस विश्व दृष्टि की बात करते थे, उसमें जनरक्षा–जनमंगल की भावना प्रबल है। इस जनजागरणवादी सृजन में उन सभी जीवन मूल्यों की प्रतिष्ठा है जिनका आधार लोकमंगल होता है। व्यापक अर्थ में हम कह सकते हैं कि देशभक्ति और जनजागरण भारतीय राष्ट्रीयतापरक कविता का एक ऐसा विशिष्ट क्षेत्र है जिसकी स्मृति हमें आज भी प्रेरणा देती है।

बोध प्रश्न–3

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें।

1. आधुनिक भारतीय साहित्य में निम्नलिखित की अभिव्यक्ति के दो–दो उदाहरण दीजिए :

   क) पराधीनता और दमन के प्रति विद्रोह

   .....

   .....

   ख) जनक्रांति की भावना

   .....

   .....

   ग) प्रकृति प्रेम के माध्यम से व्यक्त राष्ट्रीयता

   .....

   .....

   घ) देशभक्ति और जनजागरण की भावना

   .....

   .....

7.7 सारांश

- 'राष्ट्रीयता के विकास में आधुनिक भारतीय साहित्य का योगदान' नामक इस इकाई में आपने पढ़ा कि किस तरह आधुनिक काल में आकर साहित्य का उद्देश्य और स्वरूप बदल उठता है। साहित्य अब केवल भगवद्भक्ति अथवा आश्रयदाताओं को रिझाने का कार्य नहीं करता। अब वह सामान्य जन को केंद्र में रखता है। सामान्य जन की मुक्ति की आकांक्षा इस साहित्य में विविध रूपों में प्रकट होती है। विदेशी शासकों के शोषण में मुक्ति की आकांक्षा राष्ट्रीयता का संस्कार निर्मित करती है और साहित्यकार जन–मानस को पराधीनता की बेड़ियों को तोड़ने की प्रेरणा देता है। उसे अपनी गिरी हुई दशा के प्रति जागरूक बनाता है और इस गिरी दशा को उठाने की प्रेरणा देता है।

- इस युग के प्रमुख रचनाकार प्रेमचंद ने कहा था, 'वह (अर्थात् साहित्य/साहित्यकार) देशभक्ति और राजनीति के पीछे चलने वाली सच्चाई भी नहीं उनके आगे मशाल दिखाती हुई चलने वाली सच्चाई है। 'आधुनिक भारतीय साहित्य' वह मशाल बन कर दिखाता है और जनता को राष्ट्रीयता एवं स्वाधीनता के संघर्ष के लिए प्रेरित करता है।

7.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

भारतीय साहित्य का समेकित इतिहास– संपा. डॉ. नगेन्द्र, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

भारतीय साहित्य के इतिहास की समस्याएँ– डॉ. रामविलास शर्मा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।

आधुनिक भारतीय नई कविता–डॉ. कृष्णदत्त पालीवाल, सचिन प्रकाशन, अंसारी रोड, दरिया गंज, नई दिल्ली।

7.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न–1

1) देखिए, भाग 7.2

2) देखिए, भाग 7.3

3) देखिए, भाग 7.4

बोध प्रश्न–2

1) देखिए, उपभाग 7.5.1

2) देखिए, उपभाग 7.5.2

3) देखिए, उपभाग 7.5.3

4) देखिए, उपभाग 7.5.4

बोध प्रश्न–3

क) देखिए, उपभाग 7.6.2

ख) देखिए, उपभाग 7.6.3

ग) देखिए, उपभाग 7.6.4

घ) देखिए, उपभाग 7.6.6

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY